अध्याय 1

जीव विज्ञान

इस अध्याय में आप सीखेंगे कि:

- जीव विज्ञान क्या है और इसके अध्ययन की आवश्यकता क्यों पड़ती है तथा जीवधारियों के वर्गीकरण के बारे में जानकारी प्राप्त होगी।
- कोशिका क्या है तथा कोशिका कैसे जीवन की मूलभूत इकाई है।
- ऊतक क्या है तथा इसकी संरचना और अंगों के निर्माण से संबंधित आधारभूत अवधारणाएँ कौन-कौन सी हैं।
- आनुवंशिक विज्ञान के अनुप्रयोग कौन-कौन से हैं।
- मानव शरीर क्या है। इसकी उपयोगिता, इसका महत्व, इसके विभिन्न अंगों के बारे में आधारभूत जानकारी तथा इन अंगों का महत्व।
- मानव शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्व, विटामिन्स और खनिज तत्व क्यों आवश्यक हैं।
- वनस्पति विज्ञान क्या है कोशिका एवं, कोशिका विभाजन व पादप कोशिकाओं का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे।
- विषाणु एवं जीवाणु क्या है और मानव शरीर से किस प्रकार संबधित है; इसका अध्ययन करेंगे।

परिचय (Introduction)

विज्ञान की वह शाखा जिसके अन्तर्गत जीवधारियों का अध्ययन होता है 'जीव विज्ञान' कहलाता है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग लैमार्क (फ्रांस) तथा ट्रेविनेरस (जर्मन) ने किया था। इसको पुनः दो भागों वनस्पति तथा जन्तु विज्ञान में बांटा गया है। थियोफ्रेस्टस ने 500 प्रकार के पौधों का वर्णन अपनी पुस्तक *'हिस्टोरिया प्लान्टरूम'* में किया है इन्हें 'वनस्पति शास्त्र' का जनक कहा जाता है। 'हिप्पोक्रेट्स' ने मानव रोगों पर प्रथम लेख लिखा जिसे 'चिकित्सा शास्त्र का जनक' माना जाता है। अरस्तू ने अपनी पुस्तक *'जन्तु इतिहास'* में 500 जन्तुओं का वर्णन किया है जिसे **विज्ञान का जनक** कहा जाता है।

जीवों के गुण (Characteristics of Living Organisms)

- **श्वसन**—श्वसन इनका मुख्य लक्षण है। इसमें जीव वायुमण्डल से ऑक्सीजन ग्रहण करता है तथा कार्बनडाईऑक्साइड़ बाहर निकालता है। श्वसन क्रिया द्वारा वसा, कार्बोहाइड्रेट तथा प्रोटीन के विघटन से ऊर्जा प्राप्त होती है। जिससे समस्त जैविक क्रियाऐं संचालित होती हैं।
- **पोषण**—जीवन के विकास तथा ऊर्जा उत्पादन हेतु पोषण आवश्यक है। पौधे प्रकाश संश्लेषण द्वारा तथा जन्तु पौधों द्वारा पोषण प्राप्त करते हैं।
- **प्रजनन**—प्रजनन द्वारा प्रत्येक जीव अपने जैसा ही जीव पैदा कर अपने वंश परम्परा को बनाये रखता है।
- **अनुकूलन**—जीवन संघर्ष में सफल होने के लिए जीव अपनी संरचना एवं कार्यिकी में परिवर्तन कर अपने अस्तित्व को बचाते हैं।
- **गति**—जीवधारियों में जन्तु एक स्थान से दूसरे स्थान को गति करते हैं जबकि पौधे स्थिर रहकर अपने अंगों को गतिशील रखते हैं।
- **संवेदनशीलता**—वातावरण में होने वाले परिवर्तन को जीवधारी अनुभव करते हैं और आवश्यकतानुरूप अपने अन्दर परिवर्तन भी करते हैं।
- **उपापचय**—जीवों में उपापचय क्रिया होती है। जिसमें उपचय में रचनात्मक क्रियाएं तथा अपचय में अपघटन की क्रियाएं होती है।

- **जीवन चक्र**—जीवधारियों में सभी जैविक क्रियाएं निश्चित समय पर होती हैं और एक निश्चित अन्तराल के पश्चात् वह नष्ट हो जाता है।
- **जीवद्रव्य**—जीवधारियों में उपस्थित वास्तविक जीवित पदार्थ है यह जीवों की भौतिक आधारशिला है।
- **वृद्धि एवं विकास**—जीवधारियों के आकृति, भार एवं आयतन में वृद्धि होता है।
- **उत्सर्जन**—जीवधारियों द्वारा शरीर में उपस्थित हानिकारक पदार्थों का उत्सर्जन होता है।

जन्तु विज्ञान की प्रमुख शाखाएं (Major Branches of Biology)

- **आकारिकी**—जन्तुओं की आकृति एवं रचना का अध्ययन होता है।
- **शरीर क्रिया विज्ञान**—प्राणियों के अंगों के कार्यों एवं क्रियाओं का अध्ययन होता है।
- **उद्विकास**—पूर्व में पाये जाने वाले जीवों के सरल रचनाओं से जटिल रचनाओं में परिवर्तन का अध्ययन होता है।
- **आनुवांशिकी**—जीवों के आनुवांशिकी लक्षणों की वंशागति तथा भिन्नताओं का अध्ययन
- **सुजननिकी**—आनुवांशिकी के आधार पर मानव जाति की आने वाली पीढ़ी के सुधार का अध्ययन
- **यूथैनिक्स**—मानव की आधुनिक पीढ़ी का अच्छे पालन पोषण द्वारा सुधार का अध्ययन
- **जीवाश्मिकी**—जीवधारियों के जीवाश्मों को अध्ययन
- **इम्यूनोलॉजी**—संक्रमण के विरुद्ध जन्तु शरीर के प्रतिरोध का अध्ययन
- **क्रायोजेनिक्स**—इसके अन्तर्गत निम्न ताप का उपयोग करने वाली प्रक्रियाओं एवं उपायों का अध्ययन किया जाता है।
- **सूक्ष्म जैविकी**—सूक्ष्म जीवों का अध्ययन
- **बैक्टीरियोलॉजी**—जीवाणुओं का अध्ययन
- **वाइरोलॉजी**—विषाणुओं का अध्ययन
- **मिरमीकोलॉजी**—चीटियों का अध्ययन
- **ऐरेकनोलॉजी**—मकड़ियों का अध्ययन
- **हरपैटोलॉजी**—सरीसृपों का अध्ययन
- **ऑफियोलॉजी**—सर्पों का अध्ययन
- **आरनिथोलॉजी**—पक्षियों एवं उनके स्वभाव का अध्ययन
- **एन्थ्रोपोलॉजी**—मानव जाति के उद्विकास का अध्ययन
- **यूफेनिक्स**—जेनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा जेनेटिक रोगों के सुधार का अध्ययन

व्यावहारिक प्राणी विज्ञान (Applied Zoology)

- **रोग विज्ञान**—रोगों की प्रकृति, कारण, लक्षणों का अध्ययन
- **विष विज्ञान**—विषैले पदार्थों का जन्तुओं के शरीर पर प्रभाव का अध्ययन
- **राइनोलॉजी**—जन्तुओं के नाक एवं उससे जुड़ी बीमारियों का अध्ययन
- **गाइनेकोलॉजी**—मादा के प्रजनन अंगों से संबंधित रोगों एवं निदान का अध्ययन
- **कैलोलॉजी**—मानवीय सौंदर्य का अध्ययन
- **एपीकल्चर**—मधुमक्खी पालन
- **सेरी कल्चर**—रेशम प्राप्त करने व कीट पालने का अध्ययन
- **पिसीकल्चर**—मछली पालन का अध्ययन
- **पोल्ट्री**—अण्डे व माँस प्राप्त करने हेतु मुर्गी व बत्तख के पालने का अध्ययन
- **पिगरी**—सुअरों से चर्बी व माँस प्राप्त करने का अध्ययन

जीवधारियों का वर्गीकरण (Classification of Living Organisms)

1969 ई. आर. एच. व्हिटेकर ने 5 जगत् में विभाजित किया। इसके अन्तर्गत कोशिका संरचना, थैलस संरचना, पोषण की प्रक्रिया, प्रजनन एवं जातिवृत्तीय वर्गीकरण प्रमुख मानदण्ड थे।

1. **मोनरा**—प्रोकेरियोटिक कोशिका एवं अविकसित केन्द्रक पाया जाता है। इसमें जीवाणु एवं नील हरित शैवाल आते हैं।
2. **प्रोटिस्टा**—एक कोशिकीय जीव, विकसित केन्द्रक झिल्लीबद्ध कोशिकांग होते हैं, यूकैरिपोटिक कोशिकाएं पायी जाती है। जैसे—अमीबा, यूग्लीनॉयड।
3. **प्लान्टी**—बहुकोशीय पौधों इनमें प्रकाश संश्लेषण होता है, कोशिकाओं में रिक्तिकाएं भी पायी जाती है। जैसे—शैवाल, ब्रायोफाइटा, टेरिडोफाइटा, जिम्नोस्पर्म, एंजियोस्पर्म
4. **कवक**—यूकैरियोटिक, पर्णहरित से रहित होते हैं प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है।
5. **एनिमेलिया**—बहुकोशिकीय एवं यूकैरियोटिक जन्तु होते हैं।

जन्तुओं का वर्गीकरण (Classification of Animals)

जन्तुओं का मुख्य विभेद कशेरुक दण्ड के आधार पर अकशेरुकी तथा कशेरुकी में किया गया है। इन्हें क्रमशः नॉन कार्डेटा तथा कार्डेटा भी कहते हैं। वर्तमान में जन्तु जगत् का सर्वाधिक प्रचलित वर्गीकरण स्टोरर तथा यूसिंजर ने किया हैं जिनमें मुख्य का विवरण निम्न है।

- **संघ प्रोटोजोआ**—इसका अर्थ है प्रथम जन्तु। ये एक कोशीय सूक्ष्म दर्शीय जन्तु है। ये जल, गीली मिट्टी, सड़ी-गली कार्बनिक वस्तुओं आदि में स्वतंत्र जीवी या अन्य जन्तुओं एवं पौधों के शरीर में परजीवी, सहजीवी का सहभोजी होते हैं। शरीर में जटिल यौगिकों के अणुओं से बनी विशिष्ट रचनाओं को अंग न कहकर अंगक कहते हैं। इसके उदाहरण—यूग्लीना, अमीबा, पैरामीशियम, प्लाज्मोडियम आदि है।
- **संघ पेरीफेरा**—इसका अर्थ है छिद्र धारक। इनका सम्पूर्ण शरीर छोटे छोटे छिद्रों से बना होता हैं जो इनकी क्रियात्मक सक्रियता की प्राथमिक संरचनाएं है। ये बहुकोशिकीय जन्तु हैं इनमें ऊतकों का अभाव होता है। इस संघ के अधिकांश समुद्री जन्तु पौधों के समान पत्थरों या जलीय वस्तुओं से चिपके रहते है। इन जन्तुओं की प्रत्येक कोशिका अलग-अलग स्वतंत्र रूप से कार्य करती है इनमें परस्पर समन्वय नहीं पाया जाता है। शरीर पर पौधों की भाँति शाखाएं पाई जाती है। देह भित्ति में नाल प्रणाली होती है। उदाहरण—ल्यूकोसोलीनिया, यूस्पंजिया, यूपलक्टेला (वीनस के फूलों की डलिया) आदि है।
- **सीलेन्ट्रेटा या निडेरिया वत**— इस संघ का नाम 'साइडेरिया', शरीर में उपस्थित देश कोशिकाओं-'नाइडोब्लास्ट' के नाम पर पड़ा है। ये बहुकोशिकीय तथा अरीय सममित जन्तु है। कुछ जातियां स्वच्छ जल में तथा अधिकांश खारे समुद्रीजल में पायी जाती है। शरीर के सम्पूर्ण कार्य ऊतकों द्वारा सम्पन्न होते हैं। शरीर द्विस्तरीय होता है। दोनों के बीच मीसोग्लीया नामक अकोशिकीय जेली होती है। इसमें देह-गुहा का अभाव होता है। एवं सीलेन्ट्रान नामक होती है। जो जठरगुहा तथा देह-गुहा दोनो का कार्य करती है। इनका आकार बेलनाकार पाइप या छाते के समान पाया जाता है। इसके उदाहरण—हाइड्रा, ओबिलिया, काइलेशिया, जेलीफिश आदि है।
- **संघप्लेटी हेल्मिन्थीज**—अधिकांश जन्तु परजीवी होते हैं। जन्तु प्रायः फीते के आकार के चपटे या पत्ती की आकृति के होते हैं। ये त्रिस्तरीय शरीर वाले—इक्टोडर्म, मीसोडर्म एवं इण्डोडर्म होते हैं। इन जन्तुओं में अंग या तन्त्रों का विकास होता है। पोषक से चिपकने हेतु चूशक या कण्टक होते हैं। श्वसन एवं रुधिर परिसंचरण तंत्र पूर्ण रूप से अनुपस्थित होता है। उदाहरण—फैसिओला हिपैटिका तथा टिनिया सोलियम (फीता कृमि) आदि है।
- **निमैटोडा या निमैटोहेल्मिन्थीज**—इन्हें गोलकृमि भी कहते हैं। शरीर पतला, नालाकार, अविभाजित तथा दोनो सिरों पर नुकीला होता है। श्वसन तथा परिसंचरण तंत्र का अभाव पाया जाता है। वास्तविक देहगुहा के स्थान पर आभासी देहगुहा होता है। ये जन्तु परजीवी होते हैं। ये जल गीली मिट्टी या अन्य जीवों या पादपों के शरीर में पाये जाते है। इनमें नर-मादा अलग अलग होते हैं। उदाहरण—एस्कैरिस (गोलकृमि), वुचेरिया (फाइलेरिया कृमि)
  - ऐस्कैरिस द्वारा ऐस्कैरिएसिस रोग होता हैं इसमें ऐंठन, भूख न लगना, चिर-निद्रा, घबराहट, अनिद्रा, उल्टी, अतिसार, दर्द एवं ज्वर होता है।
- **संघ ऐनीलिडा**—इनका शरीर बेलनाकार, कोमल तथा कृतिगत् होता है। इनका शरीर समान खण्डों में आगे से पीछे तक बँटा होता हैं, विखण्डन शरीर के बाहर तथा भीतर स्पष्ट होता है। शरीर में वास्तविक देहगुहा पायी जाती हैं विशिष्ट श्वसनाँग प्रायः नहीं होते लेकिन रुधिर परिसंचरण तंत्र विकसित होता है। उत्सर्जन विशेष प्रकार के नेफ्रीडिया द्वारा होता है। ये उभयलिंगी या एकलिंगी होते हैं जो स्वच्छ जल, पृथ्वी के अन्दर एवं समुद्र में भी पाये जाते है। नेरिस, केंचुआ, जोंक इस संघ के जन्तु है।
  - केंचुओं का किसानों का मित्र कहते हैं। ये मिट्टी को खाकर भूमि की उर्वराशक्ति को बढ़ाते हैं। केंचुए के शरीर से गठियां, बवासीर, अतिसार, पीलिया तथा नपुंसकता की दवा बनाई जाती है।
- **आर्थोपोडा**—इसका अर्थ है संयुक्त उपांग, यह संसार का सबसे बड़ा संघ है। कुल ज्ञात संसार के जन्तु जगत् की 80 % से अधिक संख्या इन्हीं की है। शरीर—सिर, वक्ष तथा उदर में विभाजित होता है तथा संधियुक्त पाद पाए जाते हैं। उत्सर्जन मैलपिगी नलिकाओं द्वारा होता है। इनका वाह्य कंकाल काइटिन का बना होता है, काइटिन समय-समय पर त्याग दिया जाता है इसे मोल्टिंग कहते हैं। इनमें परिसंचारी तंत्र खुले प्रकार का होता है श्वसन क्लोम या फुश्फुस से होता हैं। शरीर सिर, वक्ष तथा उदर-गुहा में बंटा होता हैं ये जन्तु जलीय, स्थलीय, वायवीय या भूमि के अन्दर गड्ढा बनाकर रहते हैं। कीट इस संघ का सबसे बड़ा वर्ग है। उपयोगी कीट जैसे बाम्बिक्स मोराई (रेशम कीट), एपिस इंडिका (मधुमक्खी), लासीफर (लाख कीट), कोकीनियन बग (लाही) आदि।
  - **हानिकारक कीट**—टिड्डी, आलु का कटवी, कपास का झांगा (Red Cotton), गन्ने का पाइरिला, चावल का गंधी, गोभी का चेंपा, वाहय परजीवियों में जूँ, खटमल, पिस्सू आदि होते हैं।
- **मोलस्का**—अकशेरुकियों का दूसरा सबसे बड़ा वर्ग है। इनका शरीर कोमल, श्लेष्म से तर खण्डरहित होता हे। अधिकांश शरीर कैल्शियम कार्बोनेट के कंकाल से ढका हुआ होता है। सिर पर नेत्र तथा स्पर्षक होते हैं मुख में भोजन कुचलने के लिए रेडुला होते हैं। पाद प्रचलन के साथ साथ मिट्टी खोदने तथा शिकार पकड़ने के लिए रूपान्तरित होते हैं। परिसंचरण तंत्र खुला तथा बन्द दोनों प्रकार का होता है नर व मादा अलग अलग होते हैं। अधिकांश मोलस्क खारे जल में पाये जाते है। इसके उदाहरण—पाइला (घेंघा)

ध्यातव्य हो कि

रोग फैलाने वाले कीट:

घरेलू मक्खी—हैजा, अतिसार, सुजाक, कोढ़, टाइफाइड, तपेदिक

मच्छर—मलेरिया, फाइलेरिया, डेंगू ज्वर (दण्डक ज्वर), पीत ज्वर

सैण्डफ्लाई—कालाजार, फोड़े के रोग

खटमल—टाइफस, रिलैप्सिंग ज्वर, कोढ़

जूँ—टाइफस, ट्रेन्च ज्वर, रिलैप्सिंग ज्वर आदि।

सीपिया, कटलफिश, काइटन, नौटिलस, अण्टपद टेरिडो (जहाज कृमि) माइटिलस लोलीगो आदि है।

- **बहुमूल्य मोती**—पिक्टाडा वेल्गैरिया तथा ऑस्ट्री वेर्जीन्यूलैना नामक सीप से प्राप्त होती है। इन सीपों में जब कोई बाहरी जीव या रेत के कण सीपी के मंटल तथा कवच के बीच प्रवेश कर जाता है तो मेटल से चारों ओर चूने का स्राव जमा होकर मोती का निर्माण करता है।

- **इकाइनोडर्मेटा**—इसका अर्थ है कंटकीय त्वचा। शरीर अरीय इनकी लगभग 5000 जीवित जातियां है। ये सीलोमयुक्त समुद्री जन्तु है। इनकी त्वचा के नीचे चूनेदार प्लेट कभी-कभी त्वचा के ऊपर काँटे पाये जाते है। तो अंत: कंकाल का निर्माण करते हैं। इनमें नल पाद नामक छोटी-छोटी खोखली रचनाएं होती हैं ये जलवाहक तंत्र से जुड़ी रहती है। इनका काम प्रचलन, भोजन ग्रहण तथा श्वसन मे भाग लेना होता है। आहारनाल प्राय: कुण्डलित होती है। उत्सर्जनतंत्र अनुपस्थित होते हैं। इनमें तंत्रिका तंत्र तथा ज्ञानेन्द्रिय अल्पविकसित होते हैं। नर एवं मादा अलग-अलग होते हैं। इस संघ के प्रमुख जन्तु तारा मछली ब्रिटल स्टार, समुद्री अरचिन, समुद्री खीरा कुकुमेरिया, थायोन, समुद्री लिली।
- **संघ हेमीकॉर्डेटा**—ये जीव समुद्र के किनारे सुरंगे बनाकर रहते हैं। शरीर तीन भागों-शुंड, कॉलर तथा धड़ में बंटा होता है। इनमें पृष्ठरज्जु केवल अगले भाग में होती है। आहार नाल आकार की होती है इनमें रक्त वाहिनियाँ भी उपस्थिति होती है। उत्सर्जन शुण्ड में स्थित एक कोशिका गुच्छ द्वारा सम्पन्न होता है ये एक लिंगी होते हैं। इनके उदाहरण—जीभ कृमि बैलेनोग्लॉसस तथा सेफैलोडिस्कस आदि है।
- **संघ कॉर्डेटा**—इसके दो अधिवर्ग मुख्य हैं— मत्स्य तथा टेट्रापोडा

मत्स्य वर्ग—ये शीत रुधिर जलीय जन्तु हैं जल में तैरने हेतु पंख पाये जाते हैं गिल्स के द्वारा श्वसन क्रिया होती हैं अंत: कंकाल अस्थियों तथा कुछ में उपस्थियों का बना होता हैं। ये समुद्री तथा मीठे जल दोनों में पाये जाते हैं। इनमें विद्युत मछली शार्क, कुत्तामीन, हाथीमीन रोहू, कैटफिश, हिप्पोकैम्पस, उडन मछली

- विद्युत मछली शत्रुओं से रक्षा हेतु 20-25 वोल्ट तक विद्युत पैदा करती है।

अधिवर्ग टेट्रापोडा—इन्हें चतुष्पादी प्राणी भी कहते हैं ये नियततापी तथा अनियतापी दोनों प्रकार के होते है। कंकाल अस्थियों का बना होता है हृदय अलिन्द एवं निलय में विभक्त होता है। इस को चार अधिवर्गों में बांटा गया है:

वर्ग एम्फीबिया—जल एवं थल दोनों पर पाये जाने के कारण इन्हें उभयचर कहा जाता है टेडपोल अवस्था में पूँछ पायी जाती है और गिल द्वारा श्वसन करते हैं विकसित होकर स्थलीय जीवन व्यतीत करने लगते हैं और श्वसन फेफड़े एवं त्वचा से होने लगता है। प्रचलन पैरों के माध्यम से होता है। ये शीत रुधिर वाले होते हैं त्वचीय श्वसन के कारण त्वचा सदैव नम रहती है। हृदय में दो आलिन्द एवं एक निलेय होता है। लाल रुधिरकण में केन्द्रक उपस्थित होता है। ये अण्डे देते है यूरिया मुख्य उत्सर्जी पदार्थ है। इस वर्ग के प्रमुख जन्तु टोड, हाइला, मेढ़क, सैलामेण्डर आदि है।

सरीसृप वर्ग—ये रेंग कर चलने वाले जन्तु है। शीत रुधिर वाले इन जन्तुओं की त्वचा सूखी होती है। श्वसन फेफड़ों द्वारा होता है हृदय दो आलिन्द तथा एक निलय में बंटा होता है मात्र मगरमच्छ में दो अलिन्द व दो निलय पाये जाते हैं। लाल रुधिर कणिकाये केन्द्रक युक्त होती हैं मादा अण्डे देती हैं। सभी जन्तु माँसाहारी होते हैं ये प्राय: जीवित जन्तुओं का शिकार करते है। इनके उदाहरण—छिपकली, साँप, कच्छप, डाइनासोर (विलुप्त) आदि है। साँप में कान नहीं होते हैं। इनके अण्डे कैल्शियम युक्त कवच से घिरे होते हैं। जैसे—वृक्ष छिपकली (कैमलिऑन), वाइपर, कोबरा।

पक्षीवर्ग—पक्षियों का शरीर वायवीय जीवन के अनुकूल होता है। ये ठण्डे एवं गर्म सभी वातावरण में पाये जाते हैं। इनकी त्वचा पर पंखों का वाह्य कंकाल पाया जाता है। पंख अग्रपाद के रूपान्तरित रूप है। ये समतापी (गर्म रुधिर) वाले होते हैं। इनके जबड़ों में दाँत नहीं होते, कठोर चोंच भोजन के पकड़ने में सहायक होती है। पक्षियों में कंकाल सरन्ध्र तथा हल्की होती है। ये अण्डज है, अण्डों में सफेद एल्बूमेन तथा पीला योक पाया जाता है। आर्कियोप्टेरिक्स (विलुप्त पक्षी) तथा इक्थायोर्निस के जबड़ों में दाँत पाये जाते थे कीवी, शुतुरमुर्ग तथा ईमू उड़तें नहीं अपितु दौड़ते हैं। सबसे छोटा पक्षी हर्मिंग बर्ड है, सबसे बड़ा पक्षी एल्बाट्रासेस है।

स्तनधारी वर्ग—यह शब्द स्तन ग्रंथियाँ रखने वाले जन्तु जिनसे उत्पन्न दुग्ध द्वारा इनके शिशु का पोषण है से बना है। ये मुख्यत: स्थलीय होते हैं कुछ जलीय या वायवीय भी होते हैं। ये गर्म खून वाले होते हैं। ह्वेल एवं समुद्री गाय को छोड़कर सभी चौपायें होते हैं। इनके शरीर पर बाल होते हैं वाह्य कंकाल सींग, पंजे या खुर के रूप में होता है। त्वचा मोटी जलरोधी होती है जिन पर स्वेत ग्रंथियां होती है। इनमें वाह्य कर्ण होता है। दाँत जबड़ों की अस्थियों के गड्डों में होते हैं जो चार प्रकार के होते हैं। हृदय में चार प्रकोष्ठ होते हैं। लाल रक्त कण गोलाकार एवं केन्द्रहीन होते हैं। इनका मस्तिक अपेक्षाकृत बड़ा होता है सेरीबम तथा सेरीबेलम अधिक विकसित होता है। प्राचीन स्तन धारियों में वृषण उदर में स्थित होते हैं। वर्तमान में अधिकांश स्तनधारियों में वृषण शरीर गुहा के बाहर पाये जाते हैं। अधिकांशत: जन्तु बच्चे पैदा करने वाले होते हैं कुछ (एकीडना, डक, बिल) अण्डे देने वाले भी होते हैं। निशेचन के पश्चात् भ्रूण का विकास गर्भाशय में होता है। स्तनधारी वर्ग को तीन उपवर्गों में बांटा गया है:

1. **प्रोटोथीरिया**—इनमें सरीसृपों जैसे लक्षण होते हैं ये अण्डे देते हैं इनमें स्तनाग्रों तथा कर्ण पल्लवों का अभाव होता है। उदाहरण—एकिडना, आर्निथोरिकस, प्लेटीपस (डक बिल) आदि हैं। एकिडना और प्लेटीपस अण्डे देने वाले स्तनधारी हैं।
2. **मैटाथीरिया**—ये अल्पविकसित बच्चा पैदा करते हैं उदरगुह में स्थित शिशुधानी में (मॉर्सुपियम) बच्चे का पूर्ण विकास होता है। इसका उदाहरण कॅगारु (मैक्रापस) तथा ओपयसम (डायडाल्पस) है।

3. **यूथीरिया या प्लैसेन्टिया**—ये उच्च स्तनी हैं इनमें वाह्य कर्ण पाया जाता है भ्रूण का विकास गर्भाशय में होता है। इनमें प्लैसेंटा पूर्ण विकसित होता है। स्तन ग्रंथियों के बाहर चूचक (Teats) पाये जाते है। इन्हें कई गणों में बांटा गया है:
   - (i) **गण इन्सेक्टीवोरा**—रात्रिचर, नुकीले दाँत वाले जमीन में बिल बनाकर रहते है—छछूँदर, स्नूज, झाऊ चूहा आदि।
   - (ii) **गण काइरोप्टेरा**—प्रमुख जन्तु चमगादड़ है। ये रात्रिचर होते हैं, अगला पैर डैनों में रूपान्तरित होने के कारण ये उड़ सकता है।
   - (iii) **गण लैगोमोर्फ**—प्रमुख जन्तु खरगोश है, ऊपरी जबड़े में दाँत तेज व नुकीले होते हैं कैनाइन का अभाव होता है।
   - (iv) **गण रोडेंशिया**—प्रमुख जन्तु गिलहरी, घरेलू चूहा (रैट्स), चुहिया (माऊस) आदि है।
   - (vi) **गण सिटिसिया**—डाल्फिन, नीली व्हेल हैं, पिछला पैर, वाह्यकर्ण अनुपस्थित
   - (vii) **गण कार्नीवोरा**—प्रमुख मांसाहारी होते हैं। कैनाइन दाँत लम्बे व नुकीले होते हैं जिनसे मांस को छीलने व फाड़ने का कार्य करते है। इनमें प्रमुख—कुत्ता, भेड़िया, शेर, तेन्दुआ, बिल्ली, भालू, लोमड़ी, सील, नेवला आदि है।
   - (viii) **गण प्राइमेट्स**—सर्वाधिक विकसित स्तनी मुख्यतः वृक्षश्रयी तथा स्थलवासी होते है। हाथ पैर लम्बें अंगुलियां 5-5, नाखुन युक्त, सीधे खड़े होकर चलने की क्षमता, बोलने व औजार बनाने की भी क्षमता होती है। इनमें प्रमुख मानव, बन्दर, गोरिल्ला, लीमर आदि जन्तु है।

कोशिका (Cell)

सभी जीव छोटी-छोटी कोशिकाओं से मिलकर बने हैं। यह जीवधारियों की रचनात्मक एवं कार्यात्मक इकाई है। अर्ध पारगम्य झिल्ली से ढ़की कोशिका में स्वतः जनन की क्षमता होती है। इसकी खोज राबर्ट हुक ने की थी। श्लाइडेन एवं श्वान ने कोशिका का सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

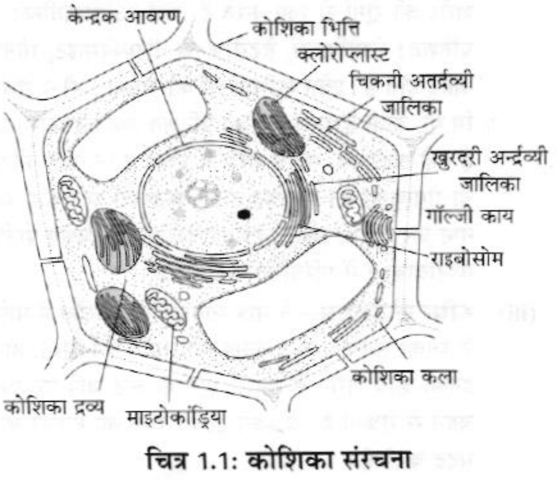

चित्र 1.1: कोशिका संरचना

रचना के आधार पर दो प्रकार की होती हैं—प्रोकैरियोट एवं यूकैरियोट।

तालिका 1.1: प्रोकैरियोट और यूकैरियोट कोशिका

प्रोकैरियोट	यूकैरियोट
1. अर्द्धविकसित होती हैं	अधिक विकसित होती है
2. वास्तविक केन्द्रक नहीं होता हैं	वास्तविक केन्द्रक होता हैं
3. माइटोकांड्रिया, लवक, न्यूक्लियोंस विकसित नहीं होते हैं	इनमें विकसित होते हैं
4. प्रायः जीवाणुओं व नील हरित शैवालों में पाये जाते हैं	सभी जन्तुओं व पौधों में पाये जाते हैं

- सबसे छोटी कोशिका 'माइक्रोप्लाज्म गैलिसेप्टिकम' की तथा सबसे बड़ी शुतुरमुर्ग के अंडे की होती है:

कोशिकाओं की आकृति लम्बी, गोलाकार, चपटी, आयताकार, बहुभुजी सभी प्रकार की होती है। कोशिका के मुख्य भाग निम्न हैं।

कोशिका भित्ति—जीवद्रव्यकला तथा कोशिकांग की सुरक्षा करती है जन्तु कोशिका में अनुपस्थित होती हैं एवं वनस्पति कोशिका में सेलुलोज की बनी होती है।

माइट्रोकान्ड्रिया—यह अण्डाकार संरचना होती है। इसमें बहुत से श्वसनीय एन्जाइम होते हैं जिनसे इलेक्ट्रान स्थानान्तरित होते हैं और ऊर्जा का निर्माण होता है। इसे कोशिका का 'शक्ति केन्द्र' कहते हैं।

जीवद्रव्यकला—यह अर्धपारगम्य झिल्ली होती है जो जल के परासरण व विसरण पर नियंत्रण रखती है।

लवक—कोशिका द्रव्य में छोटी-छोटी गोल रचनाओं के रूप में पाये जाते हैं ये दो प्रकार के होते हैं।

1. **अवर्णी लवक**—ये भोज्य पदार्थों का संग्रह करने वाले होते हैं पौधों के उन भागों में जहां प्रकाश नहीं पहुँचता भूमिगत जड़ों, तना, वायवीय भागों की गहराई में पाये जाते हैं। ये मण्ड संग्रह करने वाले (मूल, जड़, तना, बीज पत्र) वसा व तेल संग्रह तथा प्रोटीन संग्रह करने वाले होते हैं। इमाइलोप्लास्ट, इलाइलोप्लास्ट, प्रोटीनोप्लास्ट।
2. **वर्णी लवक**—यह पत्तियों में हरे रंग, फूलों फलों के रंग को प्रदान करने वाला होता है। पत्तियों में पाये जाने वाले पर्णहरित में मैग्नीशियम होता है जो प्रकाश संश्लेषण में सहायक होता है। टमाटर का लालरंग लाइकोपिन, गाजर में कैरोटिन, चुकन्दर में विटामिन पाया जाता है—बीटालेन।

लाइसोसोम—यह गोल एक परतीय झिल्ली से घिरी संरचना होती है। मुख्य कार्य अंतःकोशिकीय पाचन कोशिकीय विभाजन है। इसे आत्महत्या की थैली के नाम से जाना जाता है। लाइसोसोम कार्सिनोजेनेसिस में सहयोग कर सामान्य कोशिका को कैंसर कोशिका में भी परिवर्तित कर देता है।

केन्द्रक—कोशिका का मुख्य भाग हैं इसमें डी.एन.ए. तथा आर.एन.ए. पाये जाने के कारण आनुवांशिकी में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

गुणसूत्र—ये अनुवांशिक गुणों के वाहक होते हैं।

राइबोसोम—यह आर.एन.ए. के लगभग 80 प्रतिशत भाग होते हैं इनका मुख्य कार्य प्रोटीन संश्लेषण होता है।

तालिका 1.2: डी.एन.ए. तथा आर.एन.ए. में अन्तर

डी.एन.ए.	आर.एन.ए.
1. डी आक्सीराइबोज शर्करा होती है,	इसमें राइबों शर्करा होती है,
2. इसमें एडिनीन, ग्वानिन, थायमिन तथा सायटोसिन क्षार होता है।	इसमें एडिनीन, ग्वानिन, सायटोसिन तथा यूरेसिल क्षार होता है।
3. इसमें केन्द्रक पाया जाता है	इसमें साइटोप्लाज़्मा पाया जाता है

जन्तु ऊतक (Animal Tissues)

कोशिकाओं के समूह को ऊतक कहते हैं। इसके अध्ययन को ऊतिकी कहते हैं। इनको चार प्रमुख श्रेणियों में बाँटा गया है।

1. **उपकलाऊतक**—शरीर सुरक्षा के साथ साथ गैसीय विनिमय, अवशोषण एवं उर्त्सजन का काम भी करते है। पुनरुत्पादन की क्षमता के कारण ये घावों को भी भरते है। त्वचा, आमाशय, आँत, पित्ताशय, हृदय, जीभ आदि का बाहरी आवरण इन्हीं का बना होता है।
2. **पेशीय ऊतक**—ये तीन प्रकार के होते हैं:
   - (i) रेखित पेशीय ऊतक कंकाल पेशियों में बेलनाकार जटिल रूप में होती है जो गमन एवं अंगों का ऐच्छिक गति प्रदान करती है।
   - (ii) अरेखित पेशीय ऊतक आँतों की दीवारों में सरल एवं तर्कुरूप (Spindle Shape) में उपस्थित रहती हैं जो अंतरांगो की अनैच्छिक गति को क्रियाशील रखती है।
   - (iii) हृदय की दीवारों में बेलनाकार के रूप में स्थित हृद पेशियाँ हृदय स्पन्दन का कार्य करती है।
3. **संयोजी ऊतक**—ये अवलम्बन का कार्य करती हैं आंतों में आवश्यक चिकनाहट एवं लोच प्रदान करती हैं। ये तीन प्रकार की होती है।
   - (i) वास्तविक संयोजी ऊतक—त्वचा के नीचे, अस्थियों, उपस्थियों, नेत्रों आदि की खोल, वसा पिण्ड, अस्थिमज्जा, प्लीहा, यकृत, वृक्क आदि में स्थित होती हैं। ये जेली, कोलेजन या इलास्टिन से बनी होती हैं। शरीर की सुरक्षा, ताप नियंत्रण, पेशी संकुचन का कार्य करती है।
   - (ii) कंकालीय ऊतक—पैरों की हड्डियों के सारी लम्बी हड्डियों में तन्तुमय झिल्ली के रूप में स्थित होती है।
   - (iii) संवहनीय ऊतक—रुधिर एवं लसिका में तरल प्लाज़्मा के रूप में पायी जाती हैं ये शरीर में परिसंचरण रोग से बचाव तथा रक्तस्राव को रोकने का कार्य करती हैं।
4. **तंत्रिकीय ऊतक**—सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र में लम्बी, जटिल एवं शाखान्वित रूप में पायी जाती हैं ये विद्युत रासायनिक स्पन्दों का संवहन करती है।
5. **जनन ऊतक**—जनन अंगों की जनित कोशाएं जनन ऊतक हैं इनका कार्य युग्मक कोशाओं को निर्माण करना है।

रुधिर (Blood)

रक्त की उत्पत्ति भ्रूण के मीसोडर्म से होती है। एक स्वस्थ मनुष्य में रक्त की मात्रा मानव शरीर भार का 7 प्रतिशत होता है। यह तरल संयोजी ऊतक है जिसमें तरल प्लाज़्मा व ठोस कणिकायें होती है। इसकी प्रकृति क्षारीय (pH 7.4) होती है। इसमें दो पदार्थ पाये जाते हैं। प्लाज़्मा एवं रुधिराणु।

1. **प्लाज़्मा**—सम्पूर्ण रुधिर का लगभग 60 प्रतिशत होता है जिसमें 90 प्रतिशत जल तथा शेष भाग विभिन्न कार्बनिक, अकार्बनिक पदार्थ होते हैं। प्रतिरक्षी पदार्थ प्लाज़्मा में ही पाये जाते हैं।
2. **रुधिराणु**—रक्त का 40 प्रतिशत भाग होता है इसे तीन भागों में बांटा जाता है।
   - (i) **लाल रक्त कणिकाएं**—यह सम्पूर्ण रुधिराणु का 99 प्रतिशत होता है। यह मात्र कशेरुकी प्राणियों में ही पाया जाता है इसमें हीमोग्लोबिन नामक प्रोटीन पाया जाता है। आयरन युक्त हीमोग्लोबिन की प्रमुख विशेषता ऑक्सीजन को अवशोषित कर गहरे लाल रंग के 'आक्सीहीमोग्लोबिन' नामक अस्थायी यौगिक बनाना है। जो विखण्डित होकर ऑक्सीजन को शरीर के विभिन्न भागों में छोड़ देता है और कार्बनडाई ऑक्साइड को वापस लाता है। स्तनधारियों के लाल रक्त कणिकाओं के जीवद्रव्य में केन्द्रक नहीं पाया जाता, मात्र ऊँट के लाल रक्त कणिका में केन्द्रक पाया जाता है।
   - (ii) **श्वेत रक्त कणिकाएं**— इन्हें ल्यूकोसाइट भी कहते हैं ये शरीर की रोगों से रक्षा करते हैं इनमें इओसिनोफिल (1–4 प्रतिशत) बेसोफिल्स, हेटरोफिल्स, लिम्फोसाइट, मोनाजाइट आदि होते हैं। श्वेत कणिकाओं की संख्या 5 से 9 हजार/घन मि.मी. होती है इनमें 20–40 प्रतिशत तक लिम्फोसाइट होते हैं। मोनाजाइट्स, मानव शरीर में प्रवेश करने वाले कीटाणुओं या रोगाणुओं को एकत्रित होकर कूटपादों से पकड़ कर उसे नष्ट कर देते हैं, श्वेत रक्त कणिकाएं कुछ विशेष प्रोटीन को एण्टीवाडीज में परिवर्तित कर देती है।
   - (iii) **रुधिर प्लेटलेट्स**—ये मात्र स्तनधारियों के रक्त में पाये जाते हैं इनकी संख्या 2 से 5 लाख रुधिर प्रति घन मिमी. होती है। इनका कार्य शरीर के किसी भाग के कट जाने पर रक्त को बहने से रोकना है। ये स्वयं टूटकर रक्त का थक्का बनाने में मदद करते है।

रुधिर वर्ग—रुधिर वर्ग के विषय में सर्वप्रथम जानकारी लैण्ड स्टीनर ने दी। इन्होनें एण्टीजन एन्टीबॉडी प्रतिक्रिया के आधार पर चार समूहों A, B, AB तथा O में बाँटा।

तालिका 1.3: रुधिर वर्ग तथा उसमें उपस्थित एन्टीजन एवं एण्टीबॉडी

क्रम संख्या	रुधिर वर्ग	रुधिरबॉडी	एण्टीजन	भारतीयों में पाया जाने वाला प्रतिशत
1.	A	B	A	23.50%
2.	B	A	B	24.50%
3.	AB	अनुपस्थित	AB	7.5%
4.	O	AB	अनुपस्थित	34.50%

रुधिर आधान—शरीर में रक्त की कमी या आकस्मिक दुर्घटनावश शरीर से रक्त के बह जाने पर अन्य व्यक्ति के शरीर से रक्त लेकर आवश्यक व्यक्ति के शरीर में डालना रक्त आधान कहलाता है। रुधिर आधान समान वर्ग के व्यक्तियों में सर्वश्रेष्ठ होता है। रुधिर वर्ग AB के व्यक्ति में दोनों एण्टीजन AB पाये जाने के कारण यह सार्वत्रिक ग्राही होता है। रुधिर वर्ग O में कोई एण्टीजन नहीं होता अत: यह सर्वदाता होता है।

तालिका 1.4: विभिन्न वर्गों में रुधिर आधान

क्रम संख्या	रुधिर वर्ग	रुधिर ले सकता है	रुधिर दे सकता है	
1.	A	A, O से	A, AB को	
2.	B	B, O	B, AB को	
3.	AB	A, B, AB, O से	केवल AB को	सर्वग्राही वर्ग है।
4.	O	केवल O से	A, B, AB व O को	सर्वदाता वर्ग है।

- O नेगेटिव सर्वदाता होता है।

रक्त के कार्य—कार्बन-डाई-ऑक्साइड, ऑक्सीजन एवं भोजन का परिवहन करने के साथ-साथ हार्मोन व उत्सर्जी पदार्थों का भी परिवहन करते है। रोगों से रक्षा एवं तापमान को नियंत्रित करती है।

- रक्त में प्रोटीन की मात्रा लसिका की अपेक्षा अधिक होती है।
- रक्त में पाये जाने वाले दो प्रोटीन फाइब्रिनोजेन तथा प्रोथ्राम्बिन रक्त को जमने में सहायता करते है। इनका निर्माण यकृत में होता है।
- 'हिपैरिन' प्रोथ्रोम्बिन को निष्क्रिय बनाये रखता है जिससे रक्त, वाहिनी नलिकाओं में नहीं जमता है।

मानव शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान (Human Body and Physiology)

मानव शरीर अनेक जीवित अंगों द्वारा बनी हुई एक जीवित मशीन है। शरीर के प्रत्येक अंग एक निश्चित कार्य नियमित रूप से कार्य करते है। शरीर के कुछ अंग बाहर से प्रत्यक्ष दिखाई पड़ते हैं तो कुछ अंग शरीर के अन्दर होने के कारण दिखाई नहीं पड़ते हैं। शरीर की सबसे छोटी इकाई कोशिका होती है कई कोशिकाएं मिलकर ऊतक तथा कई ऊतक मिलकर अंग एवं कई अंग मिलकर सम्पूर्ण शरीर का निर्माण करते हैं। शरीर को बाहरी बनावट के आधार पर पांच भागों में बांटा गया है:

1. सिर
2. ग्रीवा
3. धाड़
4. उर्ध्व शाखाएं
5. अधो शाखाएं

मानव प्रजातियों के विशिष्ट अध्ययन को मानव विज्ञान कहते हैं। मानव एक कशेरुकी स्तनी तथा प्राइमेटगण का प्राणी है इसका वैज्ञानिक नाम होमोसैपियन्स है।

शरीर के तंत्र (Systems of The Body)

शरीर क्रिया विज्ञान का विकास मूलत: व्यावहारिक चिकित्सा विज्ञान की आवश्यकताओं की पूर्ति के कारण हुआ। विभिन्न रोगों के उपचार के लिए जीव की संरचना तथा प्रकार्य का ज्ञान आवश्यक है। शरीर के अन्दर जितनी भी जैविक क्रियायें होती है और उनके द्वारा सम्पन्न कार्यों को शरीर क्रिया विज्ञान के अन्तर्गत रखते हैं। प्रत्येक कार्य के लिए कई अंग मिलकर एक तंत्र बनाते हैं। जो निम्न हैं:

- पाचन तंत्र
- श्वसन तंत्र
- परिसंचरण तंत्र
- अंत:स्रावी तंत्र
- उत्सर्जन तंत्र
- प्रजनन तंत्र
- कंकाल तंत्र

- विशिष्ट ज्ञानेन्द्रिय तंत्र
- लसीका तंत्र
- त्वचीय तंत्र
- पेशी तंत्र
- तंत्रिका तंत्र

पाचन तंत्र (Digestive System)

मानव शरीर को जीवित रखने के लिए भोजन नितांत आवश्यक है। भोजन द्वारा प्राप्त पोषक तत्त्वों द्वारा विभिन्न प्रकार के ऊतकों का निर्माण, टूटी-फूटी कोशिकाओं की मरम्मत और शरीर के भीतर चलने वाली विभिन्न क्रियाओं के लिए आवश्यक ऊर्जा मिलती है। मुख गुहा द्वारा ग्रहण किये गये भोजन को आहार नाल में शरीर में अवशोषण योग्य दशा में बदलने की प्रक्रिया को पाचन क्रिया कहते हैं। भोजन के पाचन की सम्पूर्ण प्रक्रिया पाँच चरणों में सम्पन्न होती हैं—अन्तर्ग्रहण, पाचन, अवशोषण, स्वांगीकरण तथा मल त्याग।

अन्तग्रर्हण—भोजन को मुख गुहा में ले जाना अन्तर्ग्रहण कहलाता है। यह प्रक्रिया मानव को भूख लगने के कारण होती है। पर्याप्त मात्र में भोजन ग्रहण करने पर भूख शान्त हो जाती है।

पाचन—भोजन की पाचन क्रिया मुख से ही आरम्भ हो जाती है भोजन मुख में लार से मिलकर लुग्दी का रूप ले लेता है मनुष्य में लगभग 1.5 लीटर लार प्रतिदिन निकलता है इसकी प्रकृति अम्लीय (6.8) होती है इसमें टायलिन एवं माल्टोज एंजाइम पाये जाते हैं, लार भोजन के कुछ अंश को सरल शर्करा में परिवर्तित कर पचने लायक बना देता है। इसके बाद भोजन आहार नाल के माध्यम से अमाशय में चला जाता है। आमाशय में अनेक छोटी-छोटी ग्रंथियां हैं जिनसे अनेक प्रकार के अम्ल स्रवित होते हैं। भोजन के आमाशय में पहुँचने पर पाइलोरिक ग्रंथि से जठर रस निकलता है। यह हल्के पीले रंग का अम्ल (pH 1.5-3.5) होता है। आक्सिन्टिक कोशिकाओं से हाइड्रोक्लोरिक अम्ल निकलता है जो भोजन के साथ आये जीवाणुओं को नष्ट कर देता है। आमाशय में भोजन लगभग चार घंटे रहता है। इस बीच आमाशय में मंथन एवं क्रमाकुंचन गतियां आरम्भ हो जाती है तत्पश्चात् भोजन पक्वाशय में पहुँच जाता है। पक्वाशय से भोजन छोटी आँत में आता है जहाँ पचे भोजन का शोषण तथा अनपचे भाग का पाचन होता है। इसकी दीवारों से आँत्रिक रस निकलता है आँत्रिक रस क्षारीय (pH- 8) होता है। स्वस्थ मनुष्य में लगभग 2 लीटर निकलता है।

अवशोषण—भोजन का अवशोषण छोटी आँत में होता है। भोजन का आहार नाल की दीवारों में अवशोषित होकर रुधिर परिसंचरण द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचना अवशोषण है।

स्वांगीकरण—अवशोषित भोजन का शरीर में उपयोग लाया जाना स्वांगीकरण कहा जाता है। यकृत में पहुँचकर आवश्यकता से अधिक अमीनो अम्ल अमोनिया में विखण्डित होते हैं जिनसे यूरिया बनता है जो मूत्र के साथ उत्सर्जित हो जाता है।

मल त्याग—अपच भोजन बड़ी आँत में पहुँचता है जहां जीवाणु इसे मल में बदल देते हैं बड़ी आँत से मल कोलन द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। 'इन्डोल' तथा 'स्कैटोल' नामक अमीनों अम्ल के कारण मल से दुर्गंध आती है।

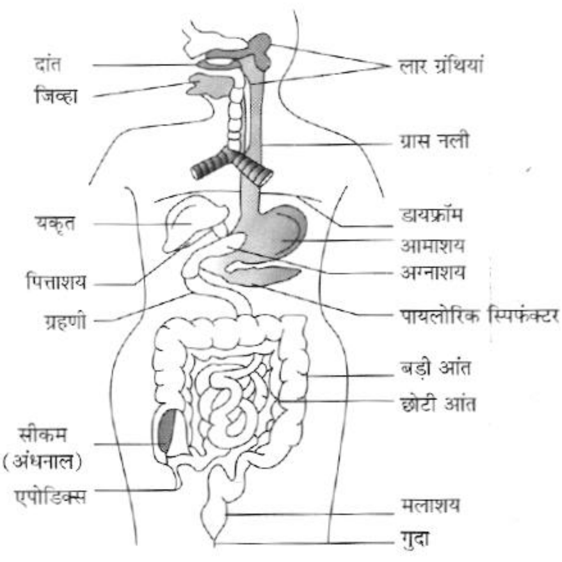

चित्र 1.2: मनुष्य का पाचन तंत्र

पाचक नाल (Digestive Tube)

पाचक नाल का विस्तार मुख से मलद्वार तक होता है जो लगभग 33 फीट टेढ़ी मेढ़ी नली के रूप में होती है। पाचक तंत्र संबंधित ग्रथियाँ:

1. यकृत
2. पित्ताशय
3. अग्नाशय

यकृत—यकृत मानव शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि है जो उदर गुहा के ऊपरी भाग में दहिनी ओर स्थित होता है इसका वजन लगभग 1.5 से 2 किलोग्राम होता है। यकृत के नीचे नाशपाती के आकार की एक छोटी थैली होती है इसे पित्ताशय कहते हैं यकृत से स्रावित होने वाला पित्त इसमें संचित होता है।

यकृत के कार्य:

- यकृत प्रोटीन उपापचय में सक्रिय रूप में भाग लेता है। प्रोटीन विघटन से अन्य पदार्थों के साथ अमोनिया जैसा विषैला पदार्थ भी बनता है जिसे यकृत यूरिया में बदल देता है। साथ ही साथ प्रोटीन की अधिकतम मात्र को कार्बोहाइड्रेट में भी बदलता है।
- कार्बोहाइड्रेट उपापचय के अन्तर्गत यकृत ग्लाइकोजन का निर्माण एवं संचय दोनो कार्य करता है। रक्त पोषण तत्त्वों का अवशोषण छोटी आँत में करता है और निर्वाहिका शिरा के माध्यम से यकृत में ले जाता है। यकृत रक्त के ग्लूकोज को ग्लाइकोजन में परिवर्तित कर देता है। यकृत रक्त में ग्लूकोज की मात्रा को नियमित बनाये रखता है।
- भोजन में वसा की कमी होने पर यकृत कार्बोहाइड्रेट का कुछ भाग वसा में परिवर्तित कर देता है।
- छोटी आँत में उत्पन्न कुछ विषैला पदार्थों को प्रभावहीन कर मूत्र के माध्यम से शरीर से बाहर कर देता है।

पित्त—यकृत ये स्रावित होने वाला पीले हरे रंग का क्षारीय द्रव है इसका pH मान 7.7 होता है। मनुष्य में लगभग 700-1000 mL पित्त प्रतिदिन बनता है।

पित्त मे कोई एन्जाइम नहीं होता। पित्त आमाशय से आये हुए भोजन का माध्यम क्षारीय कर देता है जिससे अग्नाशय रस क्रिया कर सके। यह भोजन के साथ आये जीवाणु (हानिकारक) को नष्ट कर देता है। यह विटामिन K तथा वसाओं में घुले विटामिनों के अवशोषण में सहायक होता है।

जब यकृत कोशिकाएं रुधिर से 'बिलीरूबिन' लेना बन्द कर देती हैं तो रुधिर द्वारा बिलीरूबिन सम्पूर्ण शरीर में फैल जाता है इसे ही पीलिया कहते हैं। ऐसा पित्त वाहिनी में अवरोध आ जाने से होता है। इस रोग से त्वचा, नेत्र तथा मूत्र पीला हो जाता है।

हार्मोन—पाचन क्रिया के दौरान ग्रहणी तथा क्षुद्र आँत से बहुत से हार्मोन स्रावित होते हैं।

अग्नाशय—अग्नाशय शरीर की यकृत के बाद सबसे बड़ी ग्रंथि है। यह अंत स्रावी (नलिका रहित) और बहि:स्रावी (नलिका सहित) दोनों प्रकार की ग्रंथि है। इससे अग्नाशयिक रस का स्राव होता है। लैंगर हैंस द्वीपिका इसी का एक भाग है।

अग्नाशयी रस—इसमें 98 प्रतिशत जल शेष भाग लवण तथा एन्जाइम होता है। यह क्षारीय प्रकृति का होता है। इसमें तीनों तरह के खाद्य पदार्थों को पचाने वाले एन्जाइम होते हैं जिसके कारण इसे 'पूर्ण पाचक रस' कहते हैं।

लैंगर हैंस की द्विपिका—इसकी खोज लैंगर हैंस नामक वैज्ञानिक ने की थी, इसीलिए यह नाम दिया गया। यह आमाशय में स्थित ऊतक समूह है जिससे इन्सुलिन तथा ग्लूकोगॉन नामक हार्मोन का स्राव होता है

इन्सुलिन—यह लैंगर हैंस की द्विपिका से स्रावित होता है यह खून में ग्लुकोज (शर्करा) की मात्र को नियन्त्रित करती है। इन्सुलिन ग्लुकोज के उपापचय को नियमित करता हैं यकृत में ग्लूकोज से ग्लाइकोजन के संश्लेषण की क्रिया को प्रेरित करता है। यदि रुधिर में स्थित ग्लुकोज शरीर की कोशिकाओं के उपयोग में नहीं आ पाता है तब ग्लुकोज की मात्रा रक्त में बढ़ने लगती है इस स्थिति को मधुमेह या डाइबिटीज कहते हैं यह इन्सुलिन के अल्प स्रावण से होता है। अगर इन्सुलिन का स्राव अधिक होने लगता है तो रुधिर में ग्लुकोज की मात्रा कम होने लगती है यह स्थिति 'हाइपोग्लाइसीमिया' नामक रोग की होती है।

पोषण—मनुष्य के शारीरिक निर्माण व वृद्धि, कार्य क्षमता तथा मानसिक व भावात्मक विकास तथा सन्तुलन को सुव्यवस्थित व सुचारु रूप से सम्पन्न करना पोषण कहलाता है।

कुपोषण—शारीरिक क्रियाओं को सुचारु एवं सुव्यवस्थित ढंग से संचालित करने हेतु जिन भोज्य पदार्थों एवं तत्त्वों की प्राप्ति शरीर के लिए अनिवार्य होती है। उनका भोजन में उचित मात्रा में समावेश न होना कुपोषण है। कुपोषण की स्थिति अधिकांशतया प्रोटीन की कमी से होती है। भारत में 1-5 आयु वर्ग के लगभग 75 प्रतिशत बच्चे कुपोषित है।

अत्यधिक पोषण—यदि भोजन से शारीरिक आवश्यकताओं से अधिक मात्रा में विभिन्न तत्त्व प्राप्त होते हैं तब उस स्थिति को अत्यधिक पोषण कहते हैं।

पोषक तत्व (Nutrients)

भोज्य पदार्थों में संनिहित उपयोगी रासायनिक घटक जिनकी उपयुक्त मात्र शरीर को स्वस्थ रखने के लिए परम आवश्यक होती है पोषक तत्त्व कहलाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। कार्बनिक व अकार्बनिक।

कार्बनिक पोषक तत्व (Organic Nutrients)

कार्बनिक पोषक तत्त्व चार प्रकार के होते हैं—कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन।

कार्बोहाइड्रेट—शरीर के लिए अत्यंत आवश्यक तत्त्व है। आहार में 65 प्रतिशत ऊर्जा इसी से प्राप्त होती है। ये शरीर को ऊर्जा प्रदान करते है। एक ग्राम कार्बोहाइड्रेट से लगभग 4 कैलोरी ऊर्जा उत्पन्न होती है। सभी प्रकार के अनाज एवं मीठे फलों में पाया जाता है। अधिकता से मोटापा के साथ शरीर का वजन बढ़ जाता है। कमी से वजन घटता है तथा कार्य शक्ति कम हो जाती है।

प्रोटीन—ये जटिल तथा नाइट्रोजन युक्त पदार्थ है। शरीर पोषण हेतु नितांत आवश्यक होते हैं। कोशिकाओं की वृद्धि एवं मरम्मत के साथ-साथ हार्मोन के संश्लेषण में भाग लेते है। हीमोग्लोबिन के रूप में गैसीय संवहन तथा एंटीवाडीज के रूप में शरीर की सुरक्षा करते है।

दूध, बादाम, दाल, सोयाबीन, पनीर, खोवा, मांस, मछली, अण्डा आदि प्रोटीन के प्रमुख स्रोत है। इसकी कमी से मांसपेशियाँ कमजोर हो जाती हैं, भौतिक शारीरिक तथा मानसिक विकास रुकने के साथ-साथ रोग प्रति रोधी शक्ति कम हो जाती है।

वसा—वसा शरीर को ऊर्जा प्रदान करने वाला प्रमुख तत्त्व है। एक ग्राम वसा से 9 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। वसा खाद्य पदार्थों में स्वाद उत्पन्न करते हैं, त्वचा के नीचे जमकर शरीर की ऊष्मा को रोकते है, अंगों को चोट से बचाते हैं तथा प्रोटीन के साथ जलकर शरीर को ऊर्जा देते हैं।

दूध, मांस, मछली, मूँगफली, तेल, घी आदि प्रमुख स्रोत है। वसा की कमी से त्वचा रुखी हो जाती है वजन कम हो जाता है शरीर का विकास रुक जाता है। अधिकता से मोटापा, हृदय एवं रक्तचाप की बीमारी हो जाती है।

विटामिन—ये शरीर की सामान्य वृद्धि तथा रोगों से रक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक होते हैं। इनकी कमी से शरीर रोगग्रस्त हो जाता है। विटामिनों को रक्षात्मक खाद्य कहा जाता है। इसकी खोज 'लूनिन' ने की थी।

अकार्बनिक पोषक तत्व (Inorganic Nutrients)

ये रचनात्मक तत्त्व कहे जाते हैं क्योंकि ये हमारे शरीर को रोगों से बचाते हैं तथा शरीर के विकास में सहयोग देते है। प्रमुख अकार्बनिक तत्त्व—कैल्शियम, फास्फोरस, पोटैशियम, मैग्नीशियम तथा सोडियम है।

पानी—यह शरीर की सभी कोशिकाओं का महत्वपूर्ण घटक है जो शरीर के भार का लगभग 70 प्रतिशत होता हैं शरीर की सम्पूर्ण रासायनिक अभिक्रियाएं पानी के माध्यम से ही होती हैं। सामान्यत: स्वस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन औसतन 4 से 5 लीटर पानी पीना चाहिए।

कैल्शियम—अस्थि एवं दाँतों का निर्माण करता है, हृदय की धड़कन को संचालित करता है, रक्त के जमने की क्रिया में सहायता करता है नाड़ियों को स्वस्थ रखने के साथ-साथ एन्जाइमों के स्रावित होने में सहायता करता है। दूध, दूध से बनी वस्तुओं, हरी पत्तेदार सब्जी तथा कुछ अनाजों में भी पाया जाता है। इसकी कमी से अस्थियों का ठीक से निर्माण नहीं होता, दाँत विलम्ब से निकलते हैं एवं जल्दी टूट जाते हैं। गर्भस्थ शिशु की हड्डियों के बनने की प्रक्रिया बांधित हो जाती है।

फास्फोरस—कैल्शियम के साथ अस्थि एवं दाँतों का निर्माण करता है, वसा एवं कार्बोहाइड्रेट के पाचन में सहायता करता है तथा रक्त में अम्ल एवं क्षार का संतुलन बनाये रखता है। दूध, पनीर, अण्डा, मांस, मछली, दाल, मेवे एवं अनाज इसके स्रोत हैं।

आयरन—आयरन से हीमोग्लोबिन का निर्माण होता है जो शरीर में ऑक्सीजन का संवहन करता है। इसकी कमी से अल्परक्तता हो जाता है। इससे शरीर में क्षीणता आती है अत्यधिक थकान महसूस होती है आँखों के आगे अंधेरा आना, चक्कर आना भूख न लगना आदि हो जाता है। यकृत इसका सर्वोत्तम स्रोत है। इसके अतिरिक्त मेथी, पुदीना, पालक, तिल, हरी-धनिया, चना आदि में भी पर्याप्त मात्र में आयरन पाया जाता है।

आयोडीन—थायराइड ग्रंथि से उत्पन्न होने वाला हार्मोन थायराइन कहलाता है जिसमें पर्याप्त आयोडीन होता है। आयोडीन की कमी से थायराइड ग्रंथि बड़ी हो जाती है इस बीमारी को 'ग्वाइटर' कहते हैं। ग्वाइटर के बाद क्रेटनिज्म की अवस्था आती है जिससे प्रभावित व्यक्ति में शारीरिक मानसिक परिवर्तन होने लगता है उसका तन्त्रिका तंत्र भी प्रभावित होता है। समुद्री मछली, वनस्पति आयोडीनयुक्त नमक इसके प्रमुख स्रोत है।

सोडियम—यह रक्त दाब को नियंत्रित करने के साथ-साथ जल का सन्तुलन भी बनाये रखता है। लवण (नमक), मांस, मछली, अण्डा, दूध प्रमुख स्रोत हैं।

पोटैशियम—यह हृदय की धड़कन एवं नाड़ी संस्थान के कार्यों को संचालित करता है। मांस, मछली, अनाज, फल, सब्जी आदि अच्छे स्रोत हैं।

आहार—भूख के शमन हेतु प्राणियों द्वारा जो कुछ ग्रहण किया जाता है आहार कहलाता है।

सन्तुलित आहार—सन्तुलित आहार वह आहार है जिसमें शरीर की वृद्धि, विकास कार्य तथा स्वास्थ्य संरक्षण के लिए आवश्यक पोषक तत्त्व उचित मात्र व गुण में, सन्तुलित रूप से सम्मिलित हों।

सन्तुलित आहार के लिए ध्यान देने योग्य बातें:

- उचित खाद्य पदार्थों का समावेश हो,
- सभी पोषक तत्त्व उचित मात्रा व अनुपात में हो,
- ऊर्जा की उचित इकाइयां प्रदान करता हो,
- आसानी से पाचन योग्य, रुचिकर, आकर्षक, सुगन्धित एवं स्वादिष्ट हो,
- सामाजिक रीति-रिवाजों एवं धार्मिक मान्यताओं के अनुरूप हो,
- मौसम एवं उपलब्धता को ध्यान में रखकर चयन किया गया हो,

सन्तुलित आहार को प्रभावित करने वाले कारक प्रत्येक व्यक्ति के लिए सन्तुलित आहार की अलग-अलग मात्रा एवं अनुपात होता है, यह निम्न कारकों पर निर्भर करता है:

1. आयु
2. लिंग
3. व्यवसाय
4. जलवायु एवं मौसम
5. विशिष्ट

तालिका 1.5: आयु तथा लिंग के अनुसार कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता

आयु तथा लिंग	कैलोरी की आवश्यकता
औसत आदमी	2800
औसत महिला	2200
गर्भवती महिला (अंतिम 6 माह)	2500
दूध पिलाने वाली महिला (प्रथम 6 माह)	2750
दूध पिलाने वाली महिला (6 माह पश्चात्)	2600
किशोर (13 – 15 वर्ष)	2660
किशोरी (13 – 15 वर्ष)	2360
बच्चा (5 वर्ष)	1720
शिशु (1 वर्ष तक)	1200

तालिका 1.6: विटामिनों की तालिका

विटामिन	नाम	रोग	कार्य	स्रोत
A	रेटिनाल	कुंठित वृद्धि, रतौंधी जीरोफ्थैल्मिया (कार्निया का शल्की भवन)	आँखों का स्वस्थ विकास त्वचा व श्लेष्मा कला का स्वस्थ	दूध, घी, मक्खन, टमाटर, गाजर, ताजे फल सब्जी व मछली का तेल
B_1	थायमीन	बेरी-बेरी	कार्बोहाइड्रेट का उपापचय (मेटाबोलिज्म) विकास, पेशियाँ, तंत्रिकाएं तथा हृदय का सुचारु कार्य	मूंगफली, तिल, सूखी मिर्च, दाल गेहूँ, चावल, खमीर
B_2	राइबोफ्लेविन	कीलोसिस	उपापचय में महत्वपूर्ण सहएन्जाइम	पनीर, अण्डा, यीस्ट, हरी पत्तेदार सब्जी, दूध, जिगर
B_3	निकोटोनिक एसिड या निवासिन	चर्मरोग, वृद्धिकम, बाल सफेद	कैटैबोलिज्म के कोएन्जाइम ए का घटक	अण्डा, जिगर, मांस, दूध, टमाटर मूगफली, गन्ना
B_5	पेन्टाथोनिक एसिड	पेलाग्रा	उपापचय में महत्वपूर्ण सहएन्जाइम	यीस्ट, मांस, जिगर, मछली, अण्डा, दूध, मटर, मेवा
B_6	पायराडॉक्सिन	रक्तक्षीणता पेशीय, ऐंठन चर्म रोग	अमीनोअम्ल उपापचय में सहएन्जाइम	दूध, ईस्ट, अनाज, मांस
B_7	वाटर सोल्यूबल	बायोटिन	भोजन के उपापचय में मदद करता है और स्वस्थ त्वचा को बढ़ावा देता है।	ब्राउन चावल, अण्डे की जर्दी, मांस, दही, समुद्री खाद्य पदार्थ
B_9	फोलिक अम्ल	रक्तक्षीणता, कुंष्ठित बुद्धि	वृद्धि रुधिराणुओं का निर्माण	हरी पत्तियां, जिगर, सोयाबीन, यीस्ट
B_{12}	सायनोकोबाला मिन	रक्तक्षीणता, तंत्रिका तंत्र की गड़बड़ी	वृद्धि रुधिराणु का निर्माण न्यूक्लिक अम्लों का संश्लेषण	मांस, मछली, अण्डा, जिगर, दूध
C	एस्कार्बिक अम्ल	स्कर्वी	कोलैजन तन्तु व हडिड्यों के मैट्रिक्स को निर्माण	नीबू, वंशी फल, टमाटर, आलू
D	कैल्सी-फेराल	सूखारोग, ऑस्टियोमैलेसिया	कैल्शियम व फास्फोरस का उपापचय, अस्थिव दाँत निर्माण	मक्खन, जिगर, अण्डा, त्वचा, यीस्ट, सूर्य के प्रकाश में त्वचा द्वारा निर्माण
E	टोकोफेराल	जनन क्षमता में कमी, जननांग तथा पेशियां कमजोर	कोशाकला की सुरक्षा, एपीथिलियम की वृद्धि पेशियों की क्रिया शीलता	तेल, गेहूँ, सोयाबीन, अंडें, की जर्दी
K	नैफ्थो-क्विनोन	रक्त का थक्का न जमना	जिगर में प्रोथ्रम्बिन का संश्लेषण	हरीपत्ती, अण्डा, जिगर, टमाटर, गोभी, सोयाबीन

तालिका 1.7: भोजन में पायें जाने विभिन्न पोषक तत्व प्रतिशत

पदार्थ	प्रोटीन	वसा	कार्बोहाइड्रेट	लवण	जल
अण्डा	13.2	10.3	–	0.9	75.6
मांस	15.1	14.7	–	0.8	69.4
मछली	16.0	5.0	–	1.0	78.0
दूध	3.5	3.7	4.9	0.7	87.0
चावल	6.7	2.5	76.0	1.1	15.5
गेहूँ	11.4	2.0	71.0	2.0	12.0
मक्का	8.4	4.7	79.0	1.3	13.9
आलू	2.0	0.1	21.0	1.0	75.9

तालिका 1.8: सन्तुलित आहार तालिका

खाद्य	औसत कार्य करने वाला पुरुष		भारी कार्य करने वाला पुरुष		वृद्ध पुरुष		वृद्ध महिला		सामान्य कार्य करने वाली महिला	
	शाकाहारी ग्राम	मांसाहारी ग्राम	शाकाहारी ग्राम	मांसाहारी ग्राम	शाकाहारी ग्राम	मांसाहारी ग्राम	शाकाहारी ग्राम	मांसाहारी ग्राम	शाकाहारी ग्राम	मांसाहारी ग्राम
अनाज	475	475	650	650	320	320	220	220	350	350
दालें	80	65	80	65	70	55	60	45	70	55
हरी पत्तेदार सब्जी	125	125	125	125	100	100	125	125	125	125
अन्य सब्जी	75	75	100	100	75	75	75	75	75	80
जड़ व कन्द	100	100	100	100	75	75	50	50	75	75
फल	30	30	30	30	75	75	75	75	30	30
दूध	200	100	200	100	600	400	600	400	200	100
घी/तेल	40	40	50	50	30	30	30	30	35	40
शक्कर	40	40	55	55	30	30	30	30	30	30
मांस मछली		30		30		60		60		30
अण्डा		30		30		30		30		30
मल्टीविटामिन गोली					एक	एक	एक	एक		

रोग (Diseases)

मानव शरीर के किसी अंग या तन्त्र में जब सामान्य कार्य या कार्यिकी न हो रहा हो तो उसे रोग कहा जाता है। रोग उत्पन्न करने वाले जीवों को रोगाणु कहते हैं। रोगों के अध्ययन को रोग विज्ञान कहा जाता है।

तालिका 1.9: जीवाणु जन्य रोग

रोग	जीवाणु	संक्रमण विधि	लक्षण
तपेदिक T.B	माइकोवैक्टीरियम टयूबर कुलोसिस	सीधे सम्पर्क एवं वायु द्वारा	ज्वर, खांसी, बलगम, कमजोरी, फेफड़े प्रभावित
डिप्थीरिया	कोरिनिवैक्टीरियम डिप्थीरिवाई	सीधे सम्पर्क एवं वायु द्वारा	श्वास अवरोध, गला प्रभावित
न्यूमोनिया	स्ट्रेप्टोकोकस न्यूमोनी	वायु द्वारा	तीव्र ज्वर, श्वसन तंत्र प्रभावित
काली खांसी	बेसिलस ट्यूसिस	सीधे सम्पर्क व वायु द्वारा	तेज खांसी हूपिंग की आवाज
टिटनेस	क्लोस्ट्रीडियम टिटेनाई	कील, कांटे, चोट लगने से	जबड़ें अकड़ना, ऐच्छिक पेशी संकुचन
हैजा	विब्रो कोलरी	दूषित जल व भोजन से	उल्टी, दस्त, निर्जलीकरण पेशियों में दर्द
कुष्ठ रोग	माइकोबैक्टीरियम लेप्री	सक्रंमित व्यक्ति से	त्वचा, तंत्रिकाए, अंगुलियां व पंजे प्रभावित
पीलिया	लेप्टोहाइरा इचीटीहैरेग्री	दूषित जल से	यकृत अक्रिय, रक्त व ऊतकों में पित्त वर्णको में वृद्धि
टायफॉयड	साल्मोनेला टायफी	दूषित जल व भोजन से	निरन्तर ज्वर, आंत व पाचन किया प्रभावित
मस्तिष्क ज्वर	नीसेरिया मेनिनजाइटिस	–	मस्तिष्कावरण में सूजन

(Continued)

रोग	जीवाणु	संक्रमण विधि	लक्षण
सुजाक (गोनेरिया)	नीसेरिया गोनेरी	लैंगिक संसर्ग से	मूत्रमार्ग व मादा गर्भाशयग्रीवा
प्लेग	पास्ट्यूरेला पेस्टिस या यर्सिनिया पेस्टिस	चूहों के पिस्सू से	तीव्र ज्वर, गिल्टी, सूजन अतिसार
सिफिलिस	ट्रीपोनीमा पैलिडियम	लैंगिक संसर्ग से	जननांगों में घाव व ज्वर
अतिसार	साल्मोनेला ईकोलाई	दूषित जल व भोजन	दस्त, मल के साथ रक्त

तालिका 1.10: विषाणु जनित रोग

रोग	वायरस	संक्रमण का तरीका	लक्षण
मम्स (गलसुआ)	पैरामिक्सो वायरस	सीधे सम्पर्क व वायु से	पैरोटिड लार ग्रंथि का फूलना ज्वर व गर्दन दर्द, वृषण या अण्डाशय में सूजन
खसरा	पैरामिक्सो वायरस	सीधे सम्पर्क व वायु से	शरीर पर दाने, ज्वर, नाक बहना, भूख न लगना
छोटी चेचक	वेरीसेला हर्पीज	वायु में छींक व थूक से	शरीर पर दाने व ज्वर
चिकन पाक्स	हर्पीज वायरस	वायु में छींक व थूक से	त्वचा पर बड़े दाने
जर्मन खसरा	टोगा वायरस	वायु से, त्वचा की पपड़ी से	त्वचा पर दाने, गर्भावस्था में मस्तिष्क विकास अवरुद्ध
पेलियों माइलिटिस	एन्ट्रोवायरस	पानी व भोजन से	केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र, पेशियों में पक्षाघात
रेबीज (हाइड्रोफोबिया)	रेहब्डो वायरस	पगल कुत्ते के काटने से	तेज ज्वर, गर्दन, सीने में ऐंठन अंत में मृत्यु
एड्स	रिट्रो वायरस	लैगिंक संसर्ग, रुधिर सूई, संक्रमित माता से	प्रतिरक्षा तंत्र खराब, सूजन, ज्वर, भार में कमी
इनफ्लूएंजा	आर्थोमिक्सोवायरस	वायु में छींक व खांसी से	श्वसन मार्ग व फेफड़े प्रभावित
पैराइनफ्लूएंजा	पैरामिक्सोवायरस	वायु में छींक व खांसी से	श्वसन मार्ग
हिपेटाइटिस	हिपेटाइटिस वायरस	भोजन व जल से	यकृत, प्लीहा व लसिका ग्रंथि प्रभावित
निद्रारोग	A.B. आर्बो वायरस टोगा वायरस		तंत्रिका तंत्र

तालिका 1.11: प्रोटोजोआ जनित रोग

रोग	कारक (जनक)	वाहक	प्रभाव
अमीबाएसिस	एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका	पानी, भोजन, स्वयं रोगी	पेट दर्द, दस्त, मल के साथ रक्त स्राव भी
काला जार	लिशमैनिया डोनोवानी	सैण्ड फ्लाई	तीव्र जवर, प्लीहा वयकृत में वृद्धि
ल्यूकोरिया	ट्राइकोमोनास वैजीनेलिस	लैंगिक संसर्ग से	योनि से बदबूदार गाढ़े, द्रव का स्राव कमर में दर्द
ओरियन्टल सोर	लिशमैनिया ट्रोपिका	ऐण्ड फ्लाई	त्वचा पर दाने व लाल निशान
पायरिया	ट्राइकोमोनास बुकेलिस	चुम्बन द्वारा, 'विटामिन-C की अधिक्ता से'	मसूड़ों से रक्त स्राव
अफ्रीकन निद्रारोग	ट्रिपेनोसोमा गैबीएन्स	सी.सी. मक्खी ग्लोसिना पाल्पेलिस	तंत्रिका तंत्र प्रभावित, रोगी को नींद आती है।

(Continued)

तालिका 1.11: प्रोटोजोआ जनित रोग *(Continued)*

रोग	कारक (जनक)	वाहक	प्रभाव
चागा रोग	ट्रिपेनोसोमा क्रूजी	सी.सी. मक्खी	रक्त परिवहन को प्रभावित करता है।
डायरिया	जिआर्डिया इन्टेस्टाइनेलिस	संदूषित जल व खाद्य पदार्थों द्वारा	पेट दर्द
बेलेन्टीरियान पेचिस	बेलेन्टीडियम कोलाई	दूषित जल व खाद्य	पेचिस व दस्त पेट दर्द
रोहडोसियन निद्रारोग	ट्रिपेनोसोमा रोहडेसिनयेन्स	सी.सी. मक्खी	निद्रा रोग
मलेरिया	प्लाज्मोडिम-(वाइवैक्स, ओवल, मलैरी, फैल्सीफेरम)	मादा ऐनाफिलीज	48 घंटे में तीव्र ज्वर फैल्सीफेरम से मृत्यु दर सर्वाधिक

तालिका 1.12: कृमि से होने वाला

रोग	कारक (जनक)	वाहक	प्रभाव
एस्कैरिएसिस (गोल कृमि)	ऐस्केरिस लुम्ब्रीकाइड्स	दूषित जल व भोजन	पेट दर्द, रक्ताल्पता, न्यूमोनिया
हाथीपांव (फाइलेरियल कृमि)	बुचेरिया बैन्क्राफटाई	क्यूलेक्स मच्छर	पांव का फूलना, वृषण का फूलना
क्लोनोर्किएसिस (यकृत कृमि)	क्लोनोर्किस सिनेन्सिस	घोंघा व मछली द्वारा	डायरिया, यकृत का बड़ा होना पीलिया, उदर दर्द
ओरियन्टल सोर	टिनिया सोलियम	सूअर के मांस से	प्रोटीन की कमी व कमजोरी

तालिका 1.13: विटामिन की कमी से होने वाले रोग

रोग	विटामिन की कमी		प्रभाव
जीरोप्थैलमियां	विटामिन	A	शुष्क कार्निया, इसके कारण अंधापन भी हो जाता है।
निक्टेलोपिया (रतौंधी)	विटामिन	A	रात्रि में दिखाई न देना
किरेटोमैलेकिया	विटामिन	A	त्वचा में शल्की भवन व बालों का झड़ना
डर्मेटाइटिस	विटामिन	A	शुष्क त्वचा
रिकेट्स	विटामिन	D	बच्चों का सूखा रोग अस्थियों में असामान्यता
आस्टियोमेलिसिया	विटामिन	D	अस्थियां नरम हो जाती है, महिलाओं में अधिक होता हैं
टिटेनी	विटामिन	D	अस्तियोमेलिसिया के कारण पेशियों में ऐंठन का टिटेनी रोग कहते हैं।
बन्धयता	विटामिन	E	जनन उपकला के क्षतिग्रस्त होने के बन्धयता
पक्षघात	विटामिन	E	तंत्रिका पेशीय डिस्ट्रोफी द्वारा पक्षघात होता हैं
हाइपोप्रोथ्रोम्बिनी मिया	विटामिन	K	रक्त का स्कन्दन नहीं होता
बेरी - बेरी	विटामिन	B	भूख में कमी, पेशीय निष्क्रियता, सिर दर्द
केलोसिस (Chelosis)	विटामिन	B_3 (निया सिन)	जीभ व त्वचा पर पपड़िया डायरिया आदि
एनीमिया	विटामिन	B_6	रक्ताल्पता
मेगेलोब्लास्टिक एनीमिया	फोलिक अम्ल		रक्ताल्पता
परनीसियस एनीमिया	विटामिन	B_{12}	RBC का आकार बड़ा होना, व संख्या घटना
डर्मेटाइटिस	विटामिन	B_7 (H)	शुष्क त्वचा
स्कर्वी	विटामिन	C	मसूडों से रक्त आना, त्वचा पर लाल धब्बे

- विटामिन डी—इसे सन्षाइन विटामिन कहते हैं।

एंथ्रेक्स (Anthrax)

एंथ्रेक्स सामान्यत: शाकाहारी पशुओं से होने वाली संक्रामक बीमारी है जो 'बैसीलस एन्थ्रैसस' नामक जीवाणु से होती हैं मनुष्य में संक्रमण पशुओं के संपर्क में आने से हो जाता है। इसके लक्षण 7 से 10 दिनों में प्रकट होने लगते है। रोगी को बुखार, थकान, सूखी खाँसी और बेचैनी होती है। एंथेक्स की पहचान एंटीबाँडी परीक्षण एलीसा परीक्षण, रक्त परीक्षण तथा बैक्टीरियल कल्चर द्वारा किया जाता है। संक्रमण से पूर्व टीका भी बचाव का उपाय है। संक्रमण के पश्चात् एंटी बायोटिक दवाओं का प्रयोग करना चाहिए। एंथ्रैक्स के जीवाणु जैविक हथियार के रूप में भी प्रयुक्त किये जा रहे हैं।

बर्डफ्लू (Bird Flu)

इसे एवियन इंफ्लूएंजा या एवियन फ्लू भी कहते हैं। आर्थोमिक्सोविरिडल कुल के वायरस इंफ्लूएंजा द्वारा होता है। यह वायरस पक्षियों पर रहता है, इनसे यह अन्य जन्तुओं सूअर, घोड़ा, मछली, मनुष्य आदि में फैलता है। चूंकि पक्षी इसके वाहक है। अत: इसको किसी निश्चित सीमा में रोक पाना मुश्किल हो जाता है। गत दिनों जिसका प्रकोप फैला था वह H5 N1 प्रकार का फ्लू था। इसके द्वारा फेफड़ों की कोशिकाएं संक्रमित होती है। बर्ड फ्लू की कारगर दवा टामिफ्लू।

जापानी इन्सेफेलाइटिस (Japanese Encephalitis)

उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले से प्रारम्भ हुई वायरस जनित यह बीमारी मनुष्यों में मच्छरों के काटने से पहुँचती है। इसके वायरस फ्लेवीवायरस क्यूलेक्स मच्छरों में पायें जाते हैं जो धान के खेत में प्रजनन करने की अद्भुत क्षमता रखते है। रक्त से होते हुए वायरस ग्रंथियों में पहुँचकर बहुगुणन कर संख्या में वृद्धि करते हैं पुन: रक्त द्वारा दिमाग पर आक्रमण करते हुए ऊतकों को नष्ट करते है। इससे दिमाग ही नहीं स्पाइनलकार्ड भी प्रभावित हो जाता है। वाहय श्वसन तंत्र मूलत: नाक के आन्तरिक भाग सूखकर इतने कठोर हो जाते हैं कि सांस लेने में भी कठिनाई होती है। बुखार, भयानक दर्द, चक्कर आना, जी-मिचलना आदि प्राथमिक लक्षण हैं। द्वितीय लक्षणों में शारीरिक असमर्थता, लकवा जैसी स्थिति, कपकपी दौरा पड़ना, बेहोश चेहरे पर पपड़ी दिमागी असन्तुलन आदि है। अत्यधिक डिहाइड्रेशन की वजह से शारीरिक वजन घटता जाता है और 7 से 14 दिन में मृत्यु हो जाती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में मच्छरों के प्रजनन स्थानों की अधिकता तथा द्वितीयक पोषक (पालतू सुअर आदि) की उपलब्धता के कारण यह रोग शहरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक फैलता है अत: कभी-कभी इसे ग्रामीण क्षेत्र का रोग भी कहा जाता है। इससे बचाव ही उपचार है अत: मच्छरों से बचना ही रोग से बचना है। वैसे इसका टीका (जे. ई. वैक्सीन) भी उपलब्ध है।

कैंसर (Cancer)

मनुष्य के शरीर के किसी भी अंग में, त्वचा से लेकर अस्थि तक, यदि कोशिका वृद्धि अनियंत्रित हो तो इसके परिणाम स्वरुप कोशिकाओं में अनियमित गुच्छा बन जाता है, इन अनियमित कोशिकाओं के गुच्छे को कैंसर कहते हैं। इस प्रकार कैंसर एक तरह की असंगठित ऊतक वृद्धि की बीमारी है जो कोशिकाओं में अनियंत्रित विभाजन तथा विकास के कारण होती है। कैंसर उन सभी कोशिकाओं में हो सकता है जो विभाजन की क्षमता रखती हैं। कैंसर सामान्यता यकृत एवं मस्तिष्क में नहीं होता है। कैंसर प्राय: 35 से 40 वर्ष की अवस्था तक के मनुष्यों में अधिक होता है इसके पूर्व अवस्था में यह कम होता है।

कैंसर के कारण

1. तम्बाकू का सेवन
2. एक्स किरणें
3. नाभिकीय विकिरण
4. एस्वेस्ट्स
5. सूर्य की पराबैगनी किरणें
6. औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाला धुआँ
7. कैंसर कारक रसायन (कार्सीनोजेन) जैसे—निकोटिन, कैफीन, पॉलीसाइक्लिक, हाइड्रोकार्बन्स आदि।
8. आंकोजीन्स की सक्रियता

उपचार—कैंसर का स्थायी उपचार संभव नहीं हो सका है फिर भी प्रारम्भ में ज्ञान हो जाए तो उपचार संभव है।

शल्यचिकित्सा—शरीर में जहाँ भी गांठ महसूस हो उसे निकलवा कर बायोप्सी करानी चाहिए।

रेडियोथिरैपपी—विशिष्ट अंगों की कोशिकाओं को रेडियोधर्मी (कोबाल्ट-60) किरणों से नष्ट किया जाता है।

कीमोथिरैपी—रासायनिक यौगिकों द्वारा उत्पन्न की हुई औषधियों से उपचार किया जाता है।

कैंसर उपचार हेतु सिसप्लाटिन तथा टैक्सोल दवा का प्रयोग हो रहा है।

मधुमेह (Diabetes)

ऐसी अवस्था जिसमें अग्नाशय की कोशिकाएं इन्सुलिन हार्मोन बनाना बन्द कर देती है जिससे शर्करा का उपापचय नहीं हो पाता मधुमेह कहलाता है। इससे पेशाब एवं रक्त में शर्करा की मात्र बढ़ जाती है रोगी को पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा नहीं मिल पाती है जिससे वह कमज़ोर हो जाता है। रोगी को प्यास बहुत लगती है और बार-बार पेशाब आता है। रोगी को शक्कर और शक्कर से बनी वस्तुएं नहीं लेनी चाहिए। यह दो प्रकार का होता है:

टाइप-1—यह बच्चो में अधिक पाया जाता है पैंक्रियाज इन्सुलिन बिल्कुल नहीं बना पाते रोगी को जीवित रहने हेतु इन्सुलिन के टीके लेने पड़ते हैं।

टाइप-2—यह अधिकतर 40 वर्ष की उम्र के बाद होता है। यह मोटे लोगों या जिनके मां-बाप डायबिटिक होते हैं उनको होता है। इस रोग में पैंक्रियाज कम मात्र में इन्सुलिन बनाते हैं या ठीक समय पर नहीं बनाते हैं भारत में करीब 90-95 प्रतिशत रोगी टाइप-2 प्रकार के ही हैं।

हाइपरग्लाइसीमिया—इन्सुलिन की खुराक निश्चित मात्रा से अधिक होने की स्थिति जिसमें रोगी मूर्छित हो जाता है।

हाइपोग्लाइसीमिया—कम सुगर होने की स्थिति, इसमें रोगी को बेचैनी सिर दर्द, तेज धड़कन, मतली, उल्टी या पेट दर्द की परेशानी होती है। यदि रक्त मे शर्करा 130 मिलिग्राम/डेकालीटर तथा खाना खाने के बाद 200 मिलिग्राम/डेकालीटर से अधिक हो तो व्यक्ति मधुमेह से पीडित होता है।

एलर्जी (Allergy)

व्यक्ति का किसी पदार्थ के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हो जाना एलर्जी कहलाता है। जब कोई पदार्थ जिसके प्रति शरीर संवेदनशील होता है शरीर में प्रवेश करता है तो प्रतिरक्षी उस पर आक्रमण करते हैं फलस्वरूप हिस्टामीन नामक पदार्थ कुछ कोशिकाओं से निकलता है और यही हिस्टामीन रक्त द्वारा, श्लेष्माकला या त्वचा तक पहुँचकर कर एलर्जी के लक्षण जैसे छींक आना, सांस फूलना, पित्ती, खुजली आना तथा आँखों में पानी आना आदि लक्षण पैदा करता है। उपचार हेतु एन्टी एलर्जिक दवा लेनी चाहिए।

आर्थराइटिस (Arthiritis)

इसे गठिया या बात रोग के नाम से भी जाना जाता है इस रोग मे शरीर के जोड़ों में दर्द रहता है। यह कई प्रकार का होता है।

1. **गाउट**—इसमें शरीर की अस्थियों के जोडों में साइट्रिक अम्ल जमा होने से दर्द होता है।
2. **आस्टियोआर्थराइटिस**—अस्थियों के जोडों के कार्टिलेज घिस जाते हैं इससे जोडों का लचीलापन समाप्त हो जाता है तथा वे कड़े हो जाते हैं।
3. **रुमेटाइड अर्थराइटिस**—साइनोसिल झिल्ली में सूजन आने तथा कार्टिलेज के ऊपर सख्त ऊतक उत्पन्न होने से होता है।

प्रदूषण जनित बीमारियाँ

मिनिमाटा रोग—यह शरीर में पारा (Hg) की अधिकता के कारण होती है। प्रारम्भ में यह जापान की मिनीमाता की खाड़ी में पारा संक्रमित मछलियाँ को खाने से हुई थी। उसमें शरीर के अंग होंठ, तथा जीभ काम करना बंद कर देते हैं साथ ही बहरापन आंखों का धुंधलापन तथा मानसिक असंतुलन भी पैदा हो जाता है।

इटाई-इटाई रोग—यह कैडमियम के प्रदूषण से होती है जब कैडमियम शरीर के सुरक्षा स्तर से अधिक मात्रा में पहुचता है तब यह रोग होता है। इसमें अस्थियों एवं जोडों के दर्द के अलावा लीवर व फेफड़ों का कैंसर भी हो जाता है।

ब्लू बेबी सिण्ड्रोम—नाइट्रेट की अधिकता से होता है। नाइट्रेट की अधिकता होने पर हीमोग्लोबिन से प्रतिक्रिया करके अक्रिय मिथेमोग्लोबीन बनाता है जो शरीर में ऑक्सीजन संचरण को अवरुद्ध करता है फलत: नवजात शिशु नीला पड़ जाता है।

ब्लैक फुट—आर्सेनिक के लगातर सम्पर्क से यह बीमारी होती है इससे त्वचा तथा फेफड़े का कैंसर भी हो जाता है।

मानसिक रोग

हिस्टीरिया—इच्छा अथवा आशा के विघात होने पर आवेशपूर्ण अथवा असाधारण रूप में नाटकीय व्यवहार को हिस्टीरिया कहते हैं। रोगी के हाथ-पैर में अकड़न, शरीर मे कंपकपी अथवा रोगी जोर से हँसने या रोने लगता है। यह रोग युवा लड़कियों और वयस्क स्त्रियों में अधिक होता है। कारणों में अपूर्ण मैथुन, गर्भाशय रोग, कमजोर स्वास्थ्य आदि है।

सीजोफ्रेनिया—इसमें रोगी के अन्दर व्यक्तित्व विघटन के लक्षण मिलते हैं। बुद्धि की तमाम शक्तियां युवावस्था में ही दुर्बल हो जाती है। विचारहीनता, भावहीनता, इच्छाहीनता, भ्रान्तचित्रता एवं मिथ्या प्रतीत इसके प्रधान लक्षण हैं। यह वंशानुगत रोग है।

पीडोफिलिया—यह एक यौन विकृति है जिसमें परिपक्व अवस्था का व्यक्ति चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, किसी बालक के साथ किशोरावस्था से पूर्व ही कामजनित व्यवहार प्रदर्शित करता है। यह विकृति विपरीत लिंगी अथवा समलिंगीय हो सकती है।

लिंग सहलग्न रोग

वर्णान्धता—यह लिंग-सहलग्न रोग है। इसमें रोगी को लाल एवं हरा रंग पहचाननें की क्षमता नहीं होती है। इसीलिए इसे लाल-हरा अंधापन भी कहते हैं। इसमें मुख्य रूप से पुरुष प्रभावित होता है। स्त्रियां मात्र वाहक होती है। स्त्रियों में यह रोग तभी होता है जब उसके दोनों गुणसूत्र (XX) प्रभावित हों यदि केवल एक गुणसूत्र (X) पर वर्णान्धिता के जीन हैं, तो स्त्रियाँ वाहक का कार्य करेंगी। इसके विपरीत पुरुषों के एक जीन (X) पर वर्णान्धिता के जीव उपस्थित होने पर ही पुरुष वर्णान्ध होगें।

हीमोफीलिया—इस रोग से ग्रसित व्यक्ति में रक्त का थक्का नहीं बनता है और कटने या फटने पर रक्त बहता रहता है हिमोफीलिया की वंशगति वर्णान्धता के समान होती है अर्थात् यह भी एक लिंग-सहलग्न रोग है। इसमें भी स्त्रियां वाहक होती हैं। हेल्डेन का मानना है कि यह रोग ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया से प्रारम्भ हुआ।

श्वसन (Respiration)

श्वसन सभी भौतिक एवं रासायनिक क्रियाओं को कहते हैं जिसमें वायुमण्डलीय ऑक्सीजन शरीर की कोशिकाओं में पहुँचकर भोजन का ऑक्सीकरण करता है। और ऊर्जा मुक्त होती है साथ ही साथ कार्बनडाई ऑक्साइड शरीर से बाहर निकलती है। प्रत्येक जीवित कोशिका में उपापचय की क्रिया होती हैं जिसके अन्तर्गत संश्लेषणात्मक प्रक्रिया द्वारा जो पदार्थों का संश्लेषण उपचय तथा विखण्डनात्मक प्रक्रिया द्वारा बड़े-बड़े जटिल अणुओं का टूटकर ऊर्जा उत्पन्न करना अपचय कहलाता है। ग्लूकोज को कोशिकीय ईंधन कहते हैं क्योंकि अत्यधिक ऊर्जा की प्राप्ति हेतु ग्लूकोज का जारण होता है। श्वसन एक अपचयी प्रक्रिया है जिसके द्वारा शारीरिक भार मे कमी होती है। यह दो प्रकार का होता है।

1. **अवायवीय श्वसन**—ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होने वाले श्वसन को कहते हैं। इसमें ग्लूकोज अगर मांसपेशियों में है तो

लैक्टिक अम्ल के रूप में और यदि बैक्टीरिया या यीस्ट में हैं तो इथाइल एल्कोहल में विघटित होता है। इसे शर्करा का किण्वन भी कहते हैं। अवायवीय श्वसन में कम ऊर्जा उत्पन्न होती है।

2. **वायवीय श्वसन**—यह ऑक्सीजन की उपस्थिति में होता है। इसमें ग्लूकोज का ऑक्सीजन होता है फलस्वरूप ग्लूकोज विघटित होकर कार्बन डाई-ऑक्साइड और जल बनाता है। इस प्रक्रिया में अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है।

श्वसन तंत्र (Respiratory System)

कोशिकाओं में समस्त उपापचय की क्रिया ऑक्सीजन की उपस्थिति में होती है। ऑक्सीजन की प्राप्ति वातावरण से होती है। इसके अन्तर्ग्रहण का काम श्वसन तंत्र करता है जो शरीर की प्रत्येक कोशिका को ऑक्सीजन की आपूर्ति करता है। यह सम्पूर्ण प्रक्रिया चार भागों में बटी होती है।

1. **वाह्य श्वसन**—यह फुष्फुसों में होने के कारण फुष्फुसीय श्वसन कहलाता है। इसमें ऑक्सीजन का रुधिर में मिलना तथा कार्बन डाई ऑक्साइड का बाहर निकलना शामिल है।
2. **गैसों का परिवहन**—रुधिर द्वारा श्वसन अंगो से प्राप्त ऑक्सीजन को ऊतकों तक पहुँचाना तथा कार्बनडाईऑक्साइड को श्वसन अंगों तक वापस लाना गैसों का परिवहन कहलाता है।
3. **अन्त: श्वसन**—ऊतक द्रव्य एवं रुधिर के बीच गैसीय विनिमय को कहते हैं। इसमें रक्त का हीमोग्लोबिन ऑक्सीजन से संयुक्त होकर आक्सी-हीमोग्लोबिन के रूप में समस्त शरीर में संचरित होता हुआ कोशिकाओं तक पहुँचता है।
4. **कोशिकीय श्वसन**—इस श्वसन में रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप कोशिकाओं में भोजन का ऑक्सीकरण होता है और ऊर्जा मुक्त होती है।

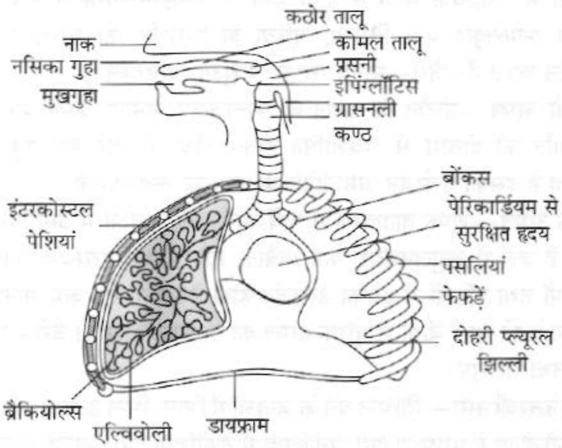

चित्र 1.3: मनुष्य का श्वसन तंत्र

5. **वाह्य श्वसन**—स्तनधारियों में यह दो चरणों में सम्पन्न होती है—श्वासोच्छ्वास तथा गैसों का विनिमय।
6. **श्वासोच्छवास**—स्तनियों में दो लचीले, स्पन्जी फेफड़े होते हैं जो वक्ष गुहा में फुष्फुसावरणी गुहाओं के भीतर सुरक्षित रहते हैं। फेफड़े में निश्चित दर से वायु भरी तथा निकाली जाती है जिसे श्वासोच्छवास कहते हैं। यह क्रिया दो खण्डों में सम्पन्न होती है।
7. **निश्वसन**—इसमें वायु बाहरी वातावरण से वायुपथ से फेफड़ों में प्रवेश करती है। सबसे पहले बाह्य इण्टरकॉस्टल पेशियों के सिकुड़ने से पसलियाँ आगे की ओर तन कर बगल में फूलती है। इससे वक्ष गुहा का आयतन बढ़ जाता है एवं फेफड़ों में निम्न वायु दाब बन जाता है और बाहर से वायु फेफड़ों में प्रवेश करने लगती है और तब तक भरती रहती है जब तक वायु का दाब बाहर एवं भीतर बराबर न हो जाए।
8. **नि:श्वसन**—आन्तरिक इण्टरकॉस्टल पेशियों के सिकुड़ने से पसलियाँ फिर अपने स्थान पर वापस आ जाती हैं परिणाम स्वरूप प्ल्यूरल गुहा का आयतन घट जाता है एवं फेफड़े पर दबाव पड़ने के कारण वह सिकुड़ता रहता है तथा फेफड़ों की हवा उसी मार्ग से जिससे प्रवेश की थी बाहर निकल जाती है।

तालिका 1.14: श्वासोच्छवास में वायु संगठन

गैस का नाम	निश्वसनी वायु में आयतन प्रतिशत में	नि:श्वसनी वायु में आयतन प्रतिशत में
ऑक्सीजन	20.96 प्रतिशत	16.3 प्रतिशत
नाइट्रोजन	78.0 प्रतिशत	78.7 प्रतिशत
कार्बन डाई ऑक्साइड	0.04 प्रतिशत	4.0 प्रतिशत
जलवाष्प	1.0 प्रतिशत	6.2 प्रतिशत

गैसों का विनिमय—यह कार्य फेफड़ों के अन्दर होता है। फेफड़ों के अन्दर वायुकोष्ठकों के चारों और रक्तकोशिकाओं का अत्यधिक घना जाल है। इसमें वायु के आने पर ऑक्सीजन पतली शिरा कोशिकाओं की दीवार से होकर रुधिर में पहुँच जाती है और रुधिर से कार्बन डाई ऑक्साइड कोशिकाओं की दीवार से बाहर निकलकर बाहर जाने वाली वायु में मिल जाती है। यह गैसीय विनिमय साधारण विसरण के आधार पर होता है।

फेफड़ों में ऑक्सीजन तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैसों का विनिमय उनके दाबों के अन्तर के कारण होता है। वायुकोष्ठक की वायु में ऑक्सीजन का दाब 100 mm Hg होता है। जबकि शिरा कोशिका के रुधिर में ऑक्सीजन का दाब 37 mm Hg होता है। इस अन्तर के कारण ही ऑक्सीजन शिरा कोशिका की ओर विसरित हो जाता है। इसी तरह कार्बन डाइ ऑक्साइड का दाब कोष्ठक में 40 mm Hg तथा शिराओं में 46 mm Hg होता है। फलस्वरूप कार्बन-डाइ-ऑक्साइड शिरा कोशिकाओं से वायु कोष्ठक की और विसरित हो जाता है। शरीर में गैसों का अदान-प्रदान सामान्य विसरण सिद्धान्त पर होता है।

गैसों का परिवहन—कार्बन डाइ ऑक्साइड तथा ऑक्सीजन का फेफड़े से शरीर की कोशिकाओं तक पहुँचना तथा पुन: फेफड़े तक वापस आने की क्रिया गैसो का परिवहन कहलाता हैं।

ऑक्सीजन का परिवहन—इसका परिवहन रुधिर में उपस्थित लालवर्णक हीमोग्लोबिन द्वारा होता है। यह हीमेटीन या हीम (आयरन पार फाइरिन)

तथा ग्लोबिन (रंगहीन प्रोटीन) से बना होता हैं इसे श्वसन वर्णक भी कहते हैं हीमोग्लोबिन, ऑक्सीजन से संयुक्त होकर अस्थायी यौगिक आक्सी हीमोग्लोबिन बनाता है। हीमोग्लोबिन बैंगनी रंग का जबकि आक्सी-हीमोग्लोबिन चमकदार लाल रंग का होता है। यह जितनी आसानी से संयुक्त होता हैं उतनी आसानी से टूट भी जाता है। आक्सीहीमोग्लोबिन संचरण द्वारा शरीर की कोशिकाओं में पहुँच जाता है। जहाँ ऑक्सीजन का आंशिक दाब कम होने के कारण आक्सी हीमोग्लोबिन का विखण्डल हो जाता है और ऑक्सीजन मुक्त होकर ऊतकों हीमोग्लोबिन का विखण्डन हो जाता है। और आक्सीजन मुक्त होकर ऊतकों में प्रवेश कर जाती है।

कार्बन-डाई-ऑक्साइड का परिवहन—इसका परिवहन हीमोग्लोबिन द्वारा कोशिकाओं से फेफड़ों तक अधिकतम 20 प्रतिशत तक ही हो पाता है शेष कार्बन डाई ऑक्साइड का परिवहन अन्य प्रकार से होता है:

1. **प्लाज़्मा में घुलकर**—कार्बन डाई ऑक्साइड प्लाज़्मा में घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाता है लगभग 7 प्रतिशत परिवहन इस रूप में होता है।
2. **बाइकार्बोनेट्स के रूप में**—कार्बन डाई ऑक्साइड रुधिर के पोटैशियम तथा सोडियम के साथ मिलकर पोटैशियम बाई कार्बोनेट तथा सोडियम बाई कार्बोनेट बनाता है, और लगभग 70 प्रतिशत भाग का परिवहन होता है।
3. कार्बन डाइ ऑक्साइड हीमोग्लोबिन के अमीनों समूह से संयोग करके कार्बोआक्सी-हीमोग्लोबिन तथा प्लाज़्मा-प्रोटीन से संयोग कर कार्बोमिन हीमोग्लोबिन बनाता है और इसका परिवहन हो जाता है।

ग्लाइकोलिसिस—कार्बन डाइ ऑक्साइड रुधिर के पोटैशियम तथा सोडियम के साथ मिलकर पोटैशियम बाई कार्बोनेट तथा सोडियम बाई कार्बोनेट बनाता है, और लगभग 70 प्रतिशत भाग का परिवहन होता है।

किण्वन—अवायवीय श्वसन के अन्तर्गत आता है। इसमें हाइड्रोजन पाइरुविक अम्ल के साथ क्रिया करके कार्बन डाइ ऑक्साइड तथा इथाइल एल्कोहल बनाता है।

लैक्टिक अम्ल का निर्माण—हाइड्रोजन जन्तुओं की मांसपेशियों, दूध के जीवाणुओं आदि में पाइरुविक अम्ल से क्रिया करके लैक्टिक अम्ल बनाता है। लैक्टिक अम्ल के बनाने से दूध फट जाता है तथा मांसपेशियों में जमा होने के कारण थकान महसूस होती है।

श्वसन भागफल—श्वसन भागफल श्वसन क्रिया के समय उपयोग में लाई गई सम्पूर्ण ऑक्सीजन एवं इस क्रिया के समय उत्पन्न सम्पूर्ण कार्बन डाइ ऑक्साइड के गैसीय विनिमय का अनुपात है।

$$\text{इसको R.Q.} = \frac{\text{कुल } CO_2 \text{ उत्पादन}}{\text{कुल का } O_2 \text{ उपभोग}} \text{ से निकालते है।}$$

उत्सर्जन (Excretion)

शरीर की कोशिकाओं से विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने की क्रिया को उत्सर्जन कहते हैं और अंग इस क्रिया में भाग लेते हैं उन्हें उत्सर्जी अंग कहते हैं। उत्सर्जन द्वारा कोशिका के लिए स्थायी आन्तरिक वातावरण बनायें रखा जाता है जिससे पदार्थों की हानिकारक मात्रा शरीर से बाहर निकल जाए तथा न्यूनतम आवश्यक मात्रा शरीर में जैविक कार्यों हेतु बनी रहें।

शरीर मे भोज्य पदार्थों के पाचन से कार्बोहाइड्रेट तथा वसा के अपचय द्वारा जल तथा कार्बन डाइ ऑक्साइड के रूप में अपशिष्ट बनता है। इनका निष्कासन-मल-मूत्र, पसीना तथा उच्छ्वास द्वारा हो जाता हैं लेकिन प्रोटीन के अपचय से जटिल नाइट्रोजनी अपशिष्ट बनता है जो शरीर से आसानी से नहीं निकलता है इनका निष्कासन जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं के द्वारा विशेष उत्सर्जी अंगों द्वारा ही होता है।

उत्सर्जन एवं मलत्याग—पाचन के पश्चात् बचे अपच भोजन को विष्ठा के रूप में आहारनाल के अन्तिम भाग गुदा द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। अपचित भोजन कभी भी शरीर की किसी कोशिका में प्रवेश नहीं करता और न ही वह किसी उपापचय प्रक्रिया में भाग लेता है। अत: वह उपापचयी अपशिष्ट पदार्थ नहीं होता है।

उत्सर्जन में अपशिष्ट पदार्थों का जो शरीर के लिए अनुपयुक्त होते हैं, रक्त परिसंचरण एवं कोशिकाओं में से निष्कासन होता है। वृक्क द्वारा अपशिष्ट पदार्थों के निष्कासन में वृक्क कोशिकाओं द्वारा ऊर्जा उन्मुक्त होती है जब मलत्याग में ऐसा कुछ भी नहीं होता। अत: मलत्याग तथा उत्सर्जन दोनों अलग-अलग प्रक्रियाएं हैं।

उत्सर्जी पदार्थ

अमोनिया—अमीनो अम्ल के विघटन से बनने वाला अत्यंत विषैला पदार्थ है जो जल में घुलनशील है यह मूत्र में अमोनिया लवण के रूप में रहता है इसका उत्सर्जन अमोनोटेलिक उत्सर्जन कहलाता है। अधिकांश जलीय जन्तुओं में उत्सर्जन होता है। जैसे—कुछ मछलियाँ, सभी प्रोटोजोआ, पोरीफेरा।

यूरिया—अमोनिया के संश्लेषण से उत्पन्न होने वाला यूरिया नाइड्रोजनी उत्सर्जी में सर्वाधिक मात्रा में पाया जाता है। रंगहीन, गंधहीन, स्वाद में कड़वा अपेक्षाकृत कम विषैला, यूरिया के उत्सर्जन को यूरियोटोलिक उत्सर्जन कहते हैं। जैसे—मानव, स्तनी, केंचुआ, घड़ियाल।

अमीनो अम्ल—प्रोटीन के पाचन के फलस्वरूप अमीनो अम्ल बनता है यह आँत की दीवारों से अवशोषित होकर रुधिर से होते हुए यकृत में पहुँचता हैं इसका उत्सर्जन अमीनोटेलिक उत्सर्जन कहलाता है।

यूरिक अम्ल—शुष्क वातावरण में पायें जाने वाले जन्तुओं में अमोनिया से बनता है जल में अघुलनशील, कम विषैला, ठोस रूप में उत्सर्जन होता है। सरीसृपों तथा पक्षियों में इसका उत्सर्जन होता है। पानी की कम मात्रा का उपयोग करने वाले जीवों में यूरिक अम्ल का उत्सर्जन होता है। जैसे—पक्षी, कीट तथा सरीसृप।

प्रमुख उत्सर्जी अंग—विभिन्न वर्ग के जन्तुओं में भिन्न-भिन्न उत्सर्जी अंग होते हैं। प्रोटोजोआ में परासरण द्वारा, एनीलिडा में नेफ्रीडिया द्वारा, प्लेटीहेल्मिन्थीज में ज्वाला कोशिकाओं द्वारा तथा आर्थोपोडा में मेल्पीगी नलिकाओं तथा ग्रीन ग्रंथियों से उत्सर्जन होता है। पक्षियों व सरीसृपों में आहारनाल द्वारा उत्सर्जन होता है उच्च वर्गीय कशेरुकियों के प्रमुख उत्सर्जी अंग निम्न हैं।

त्वचा—इसमें श्वेत ग्रंथियाँ होती हैं जो जल में घुलित पदार्थों को पसीने के साथ उत्सर्जित करती हैं।

यकृत—इसके अन्दर ही अमीनों अम्ल से यूरिया बनता है जिसका उत्सर्जन होता है।

फेफड़ों—फैट (वसा) और कार्बोहाइड्रेट के विघटन से कार्बन डाइ ऑक्साइड और जल बनाता है। जिसका उत्सर्जन श्वासोच्छवास के द्वारा होता है।

वृक्क—एक जोडी सेम के बीच के आकार की लगभग 5 इंच लम्बा होता हैं वाह्यकार्टेक्स एवं भीतरी मेडुला इसके दो भाग होते हैं। इसकी कार्यात्मक इकाई नेफ्रान (वृक्क नलिकाएं) हैं जिनकी संख्या लगभग 11200000 होती हैं नेफ्रान द्विभित्तिक, प्याले के आकार के वोमन सम्पुट का बना होता है जिसमें पतली रुधिर कोशिकाओं का गुच्छा पाया जाता है। यह दो प्रकार की धमनियों अभिवाही (चौड़ी) अपवाही (पतली) बना होता है। अभिवाही धमनियाँ रुधिर को ग्लोमेरुलस से छानकर वोमन सम्पुट की गुहा में पहुँचा देते हैं वोमन सम्पुट की गुहा में पहुँचे रुधिर प्लाज़्मा का लगभग 20 प्रतिशत भाग छानकर पहुँच जाता है।

ग्लोमेरुलस से छने मूत्र को बाहर निकालने से बहुत आवश्यक पदार्थ भी बाहर निकल जाते अतः इसके बाहर जाने से पहले इसका वर्णात्मक पुनरावशोषण होता है। समीपस्थ कुण्डलित नलिका में पतली माइक्रोविलाई पायी जाती है जिसमें अवशोषण 20 गुना बढ़ जाता है। दूरस्थ कुण्डलित नलिका में पहुँचे निस्यंद में जल एवं यूरिया, इसकी दीवारों के लिए पारगम्य होती है। यहां से अल्प परासारी निष्यंद संग्रह नलिका में पहुँचता है जहां से यह पेल्विस में पहुँच जाता है और मूत्र कहलाता है।

मूत्र—यह हल्का अम्लीय (pH–6–0) पीले रंग का होता हैं हीमोग्लोबिन के विखण्डन से बनने वाला वर्णक यूरोक्रोम के कारण इसका रंग पीला होता है मूत्र का रासायनिक संगठन निम्न है:

तालिका 1.15: मूत्र का रासायनिक संगठन (Chemical Composition of Urine)

रसायन	प्राथमिक मूत्र (प्रतिशत में)	अंतिम मूत्र प्रतिशत
पानी	92	96.44
ग्लूकोज़	.1	अनुपस्थित
यूरिया	.03	2.0
सोडियम आयन	.3	.4
क्लोराइड आयन	.37	.7
पोटैशियम आयन	.02	.15
यूरिक अम्ल	.004	.05

डाययूरेसिस—मूत्रस्राव का सीधा सम्बंध रक्त में यूरिया की मात्रा बढ़ने से है। मूत्र स्राव की मात्रा बढ़ जाने को डाययूरेसिस कहते हैं वे पदार्थ जो मूत्रस्राव की मात्रा को बढ़ाते हैं डाययूरेसिस कहलाते हैं जैसे:—यूरिया, ग्लूकोज, कैफीन, सुक्रोज, मैनिटॉल आदि।

वृक्क के कार्य—उपापचय के फलस्वरूप विभिन्न अपशिष्ट पदार्थों को मूत्र के रूप में शरीर से बाहर निकालता है।

- रक्त के pH मान को नियंत्रित करता है।
- रक्त के परासरणी दाब तथा उसकी मात्रा को नियंत्रित करता है।
- रुधिर तथा ऊतक द्रव्य में जल एवं लवणों की मात्रा को निश्चित कर रुधिर दाब को बनाए रखता है।
- शरीर में ऑक्सीजन की कमी (हाइपॉक्सिया) की स्थिति में शेष के स्रावण से एरिथ्रोपोईटिन नामक हार्मोन द्वारा लाल रुधिराणुओं के निर्माण में सहायता करता है।
- बाह्य पदार्थों जैसे दवा, विष आदि जिनका शरीर के लिए कोई उपयोग नहीं है उन्हें बाहर निकाल देता है।

हॉर्मोन्स (Hormones)

ये विशिष्ट यौगिक हैं जो अन्तःस्रावी ग्रंथियों से स्रावित होते हैं और रुधिर के साथ शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचकर अंगों के कार्यो को प्रभावित करते हैं। हॉर्मोन मुख्यतः प्रोटीन, अमीनों अम्ल, स्टीरॉइड्स एवं कैटेकोलेमीन्स होते है। ग्रंथियां दो प्रकार की होती है।

1. **बहिःस्रावी**—इनसे स्रावित स्राव एक नलिका या वाहिनी द्वारा शरीर के किसी निश्चित भाग में एक नलिका या वाहिनी द्वारा पहुँचाया जाता है इन्हें नलिकायुक्त ग्रंथियां भी कहते हैं। जैसे—दुग्ध, ग्रंथिया, स्वेद, अश्रुग्रंथिया आदि।
2. **अंतःस्रावी ग्रंथिया**—ये नलिका विहीन होती है इनसे निकलने वाला स्राव सीधे रक्त परिसंचरण के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में पहुँचता है इनके स्राव को हार्मोन कहते हैं।

अंतःस्रावी ग्रंथियाँ

1. **पीयूष**—यह मस्तिष्क में स्थित होती है।
2. **थायरॉइड**—यह गले में स्थित होती है।
3. **पैराथायरॉइड**—यह गले में थायरॉइड के अन्दर धंसी रहती है।
4. **पीनियलबॉडी**—मस्तिष्क में स्थित होती है।
5. **थायमस ग्रंथि**—यह वक्ष में हृदय के पास स्थित होती है।
6. **एड्रीनल ग्रंथि**—उदर में वृक्क के ऊपर स्थित होती है।

अग्नाशय (Pancreas): यह उदर में स्थित मिश्रित ग्रंथि का प्रकार है। इनके अतिरिक्त वृक्क, आहारनाल, त्वचा, वृशण, अण्डाशय तथा प्लैसेन्टा से भी हार्मोन्स का स्राव होता है।

तालिका 1.16: अंतः स्रावी ग्रंथि

अंतः स्रावी ग्रंथि का नाम	शरीर में स्थिति	स्रावित हार्मोन	अल्पस्रावण का प्रभाव	अतिस्रावण का प्रभाव
1. पिट्यूटरी ग्रंथि या मास्टर ग्लैण्ड	खोपड़ी की स्फिनायड अस्थि के सेलाटार्सिका गड्ढ़े में	1. सोमैट्रोट्रापिक हार्मोन (STH) वृद्धि हार्मोन	शारीरिक बौनापन	शारीरिक विशालता, हाथ-पांव लम्बे एवं जबडे बडे, इसे 'एक्रोमेगाली' कहते हैं।
		2. गोनैडोट्रॉपिक हार्मोन (GTH) 3. थाइराइड स्टीमुलेटिंग हार्मोन (थायरोट्रोपिक) (TSH) 4. लैक्टोजे निक हार्मोन 5. मिलैनोसाइट स्टीमुलेटिंग हार्मोन (MSH) त्वचा में मिलैनिन वर्णक के निर्माण को प्रेरित करता है तथा त्वचा में तिल व चकत्ता के निर्माण को प्रेरित करता है। 6. ऑक्सीटोसिन (OT)-प्रसव के समय गर्भाशय को फैलना तथा प्रसव के बाद उसे संकुचित करना, दुग्ध स्राव पर नियंत्रण करता है।	मादा में अण्डाशय का आकार क्षीण होने लगता है गर्भाशय तथा योनि विलुप्त थायराक्सिन की कमी माता में दुग्ध का निर्माण नहीं होता उसे संकुचित करना, दुग्ध स्राव पर नियंत्रण करता है।	लैंगिक परिपक्वता जल्दी आता है। थायराक्सिन की अधिकता स्तन बड़े हो जाते हैं तथा असमय दूध आने लगता है।
2. थायरायड	गर्दन में	थायराक्सिन	बच्चों में जड़मानवता बौनापन, पेट बड़ा, त्वचा सूखी, वयस्कों में मिक्सोडेमा, शरीर भारी एवं कमजोर, वृद्धावस्था के लक्षण, घेंघा एवं हाशीमोटो रोग	उपापचय क्रिया की दर तेज शरीर के तापक्रम में वृद्धि, अधिक भूख लगना, हृदय गति तेज, स्वभाव में चिड़चिड़ापन एक्सोथाल्मिक ग्वायटर (Exopthalmic Goitre)
3. पैरा थायरायड	थायरायड ग्रंथि के पृष्ठ सतह पर	पैराथार्मोन इसे Collip's Hormone भी कहते हैं।	तंत्रिकाओं एवं पेशियों में अनावश्यक उत्तेजना, टिटनेस रोग, दांत, हड्डियां व मस्तिष्क कम विकसित	आस्टियोपोरोसिस, हाइपरकैल्शीमिया, गुर्दे एवं पित्ताशय की पथरी
4. पीनियल बॉडी	मस्तिष्क के डायसेफैलॉन की पृष्ठीय सतह पर	मिलैटोनिन	इससे त्वचा के रंग पर प्रभाव पड़ता है।	
5. थायमस	वक्षीय गुहा में हृदय के ट्रैकिया के दोनों ओर	थायमोसीन थायमीन प्रथम थायमीन द्वितीय	कंकाल निर्माण में रुकावट, वसा का जमाव	उपापचयी क्रियायें अत्यंत तीव्र, मृत्यु भी हो जाती है।

(Continued)

अंतः स्रावी ग्रंथि का नाम	शरीर में स्थिति	स्रावित हार्मोन	अल्पस्रावण का प्रभाव	अतिस्रावण का प्रभाव
6. अग्नाशय	उदर गुहा में अमाशय के पीछे	1. इंसुलिन	मधुमेह, मूत्र में जल की मात्र बढ़ जाना, पौलीडिप्सिया, कीटोसिस	ग्लुकोज की कमी से मस्तिष्क में उत्तेजना, थकावट, बेहोशी शरीर में ऐंठन, मृत्यु
		2. ग्लुकैगॉन	शरीर में अम्लीयता में वृद्धि रुधिर में ग्लुकोज की घटी हुई मात्रा को सामान्य करने के लिए वसा व ग्लाइकोजन के विखंडन को प्रेरित पचे	
		3. सोमेटोस्टेनिन	भोजन के स्वांगीकरण की अवधि को बढ़ावा	
7. हाइपोथैलमस	मस्तिष्क में	1. थायरोट्रापिन 2. कार्टिकोट्रोपिन 3. गोनैडोट्राइपिन	पीयूष ग्रंथि को हार्मोन स्रावित करने की प्रेरित करते हैं।	
8. जनद	नर में वृषण एवं मादा में अण्डाशय	1. एण्ड्रोजंस (नर हार्मोन) टेस्टोस्टीरॉन	नर सहायक जननांगों तथा अतिरिक्त लैंगिक लक्षणों के विकास में प्रेरक अल्पस्राव से नंपुसकता व अधिकता से शीघ्र लैंगिक परिपक्वता।	
		2. एस्ट्रोजन्स	मादा सहायक जननांगो तथा लैंगिक लक्षणों का प्रेरक	
		3. प्रोजेस्ट्रान	गर्भधारण के लिए आवश्यक दशाओं का विकास	
		4. रिलेक्सिन	प्रसव के समय प्यूविक सिम्फाइसिस को फैलाकर शिशु जन्म को आसान बनाना।	
9. वृक्क	उदर गुहा में	1. रेनिन 2. एरिथ्रोजेनिन	ह्रदय स्पंदन एवं वृक्क के अल्ट्राफिल्ट्रेशन को तेजकर वृक्क नलिकाओं में सोडियम एवं जल के पुनरावशोशण का बढ़ाना अस्थि मज्जा में लाल रक्त कणिकाओं के निर्माण को प्रेरित	
10. त्वचा	त्वचा	1. अरगोकैल्सीफरॉल 2. कोलीकैल्सिफेरॉल	अस्थि-निर्माण हेतु प्रेरित करता है कमी से सूखारोग (रिकेट्स) होता है इसमें हड्डियां कमजोर पतली व टेढ़ी हो जाती है।	

तंत्रिका तंत्र (Nervous System)

यह शरीर की दूर संचार व्यवस्था है जो सम्पूर्ण शरीर में महीन धागे के रूप में फैली होती है। यह वातावरणीय परिवर्तनों की सूचना संवेदी अंगो से प्राप्त कर विद्युत आवेगों के रूप में प्रसारित करती है। कार्य तथा गुणों के आधार पर तंत्रिका तंत्र के दो मुख्य भाग है:

1. **ऐच्छिक तंत्रिका तंत्र**—ये प्रतिक्रियाएं प्राणी की इच्छानुसार सुनियोजित एवं उद्देश्य पूर्ण होती है। इन तंतुओं से कई तरह की संवेदनाए मस्तिष्क को पहुँचती है इन पर प्रमस्तिष्क का नियंत्रण होता हैं
2. **अनैच्छिक तंत्रिका तंत्र**—प्राणी की चेतना या इच्छा पर प्रतिक्रियाएं नहीं होती। अनैच्छिक तंत्रिका पेशियां मूत्राशय, गर्भाशय, फेफड़ा, आमाशय, आँत आदि में पायी जाती है।
3. **न्यूरान**—तंत्रिका ऊतक की इकाई को न्यूरान कहते हैं। यह दो भागों से मिलकर बना होता है। पहला साइटान, यह गोल, अण्डाकार तथा केन्द्रक युक्त होता है। दूसरा एक्सांन, यह काफी बड़ा व लम्बा होता है इसमें एक्सोप्लाज्म भरा होता है।

कार्य के आधार पर न्यूरॉन निम्नलिखित प्रकार के होते है:

- **रिले न्यूरॉन**—यह उद्दीपन को दूसरे न्यूरॉन की तरफ पहुँचाती है।
- **संवेदी न्यूरॉन**—ये उद्दीपनों को विभिन्न अंगों से केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (CNS) की तरफ ले जाते है।
- **साइनेप्स**—वह सरंचना जो रासायनिक सिग्नल को एक तंत्रिका कोशिका से दूसरी तंत्रिका को कोशिका तक पहुँचाती है।

तालिका 1.17: प्राणियों के तंत्रिका आवेगों की गति

स्तनधारियों में	100 से 130 मी./से.
उभयचरों में	20 से 40 मी./से.
सरीसृपों में	15 से 35 मी./से.
मछलियों में	2 से 35 मी./से.

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र–मस्तिष्क एवं मेरुरज्जु

1. **मस्तिष्क**—तंत्रिका ऊतकों से बना अत्यंत संवेदनशील, कोमल सफेद अंग होता है मनुष्य के मस्तिष्क का वजन लगभग 1400 ग्राम होता है। क्रेनियम नामक बाहरी खोल इसे बाहरी आघातों से बचाता है। मस्तिष्क तीन झिल्लियों, जिसे मस्तिष्कावरण (मेनिनजीज) कहते हैं, से ढ़का रहता है। जिसे ड्यूरामेटर (बाह्य) अरेकनॉइड (मध्य) तथा पायोमेटर (आन्तरिक) कहते हैं। प्रथम दो नान-इलास्टिक तथा कठोर होती है। जबकि आन्तरिक झिल्ली-पतली, मुलायम तथा पारदर्शी होती है। इन पर्तो के सेरीब्रोस्पाइनल द्रव भरा रहता है जो मस्तिष्क को बाहरी आयातों से बचाता है।

मस्तिष्क के मुख्य भाग तीन है अग्र, मध्य एवं पश्च मस्तिक।

1. **अग्रमस्तिष्क (प्रोसेन सिफेलॉन)**—इसके दो भाग है सेरीब्रम तथा डाइएनसिफेलॉन।

   सेरीब्रम अण्डाकार संरचना है इसके बीच में एक धारी (ग्रूव) होती है जो इसकों दो भागों में दाँए एवं बाँए गोला) में बाटती है। सेरीब्रम बुद्धिमत्ता, याददाश्त, सचेतन संवेदनाओं, इच्छाशक्ति, ऐच्छिक गतियों, स्मृति ज्ञान, वाणी, चिन्तन के केन्द्र है। ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त प्रेरणाओं का इसमें विश्लेषण एवं समन्वय होता है।

   डाइएनसिफेलॉन, सेरीब्रम के पीछे तथा कुछ नीचे स्थित होता है यह अत्यंत संवेदी होता है इसके दो भाग थैलमस तथा हाइपोथेलेमस है।

   थैलेमस गोलाकार संरचना है जो दर्द, ठण्डा, गर्म आदि पहचाननें का कार्य करती है।

   हाइपोथेलेमस अन्त:स्रावी ग्रंथियों के स्राव का नियंत्रण करता है। यह भूख, प्यास, ताप नियंत्रण, प्यार, घृणा, प्रसन्नता, क्रोध, पसीना, रक्त दाब पर नियंत्रण के साथ-साथ कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा जल के उपापचय पर भी नियंत्रण रखता है।

2. **मध्य मस्तिष्क (मीसेनसिफेलॉन)**—इसके दो भागों में कार्पोराक्वाड्री जेमाइना, दृष्टि एवं श्रवण शक्ति का नियंत्रण केन्द्र होता है जबकि सेरीबल पेडन्कल, मस्तिष्क के अन्य भागों एवं मेरुरज्जू से सम्बंध स्थापित करता है।

3. **पश्च मस्तिष्क (रहोम्बेन सिफेलॉन)**—इसके तीन भाग है—सेरीबेलम, मेडुला, ऑब्लॉगेटा तथा पोन्स वेरोली।

   सेरीबेलम बड़ा, ठोस तथा जटिल रचना है जो सेरीबम के बिल्कुल नीचे पश्च भाग में स्थित होता है। इसकी पृष्ठीय सतह वलयित होती है। इसका मुख्य कार्य शरीर का सन्तुलन बनाये रखने के साथ-साथ पेशियों के टोन का नियमन ऐच्छिक पेशियों के संकुचन पर नियंत्रण तथा आन्तरिक कान से संवेदनाएं प्राप्त करना है।

   मेडूला ऑब्लॉगेटा मस्तिष्क का सबसे पीछे का भाग है जो त्रिभुजाकार, आगे से चौड़ा तथा पीछे से संकरा होता है। यह उपापचय, रक्तदाब, आहारनाल के क्रमाकुंचन, ग्रंथिस्राव तथा हृदय धड़कनों पर भी नियंत्रण रखता है।

   पोन्स वेरोली की अग्र सतह पर स्थित होता है यह सेरीबेलम के दोनों पश्च भागों को जोड़ता है यह गति पर नियंत्रण रखता है।

4. **मेरु रज्जु**—मेडुला आब्लॉगेटा का पिछला भाग मेरु रज्जु का निर्माण करता है यह बेलनाकार छड़ जैसी रचना है जो कशेरुक दण्ड की न्यूरल कनेल में रहती है। मस्तिष्क की तरह यह भी झिल्लियों से ढ़की रहती है जिसे क्रमश: ड्यूरामेटर (बाहरी) अरेकनाइड (मध्य) तथा पायोमेटर (आन्तरिक) कहते हैं। इन झिल्लियों के बीच केविटी में सेरीब्रोस्पाइनल द्रव्य भरा रहता है। जो स्पाइनल कार्ड को बाहरी आघातों से बचाता है। मेरुरज्जु संवेदी आवेगों को मस्तिष्क से लाता व मस्तिष्क को जाता है तथा प्रतिवर्ती क्रिया के केन्द्र का कार्य करता हैं।

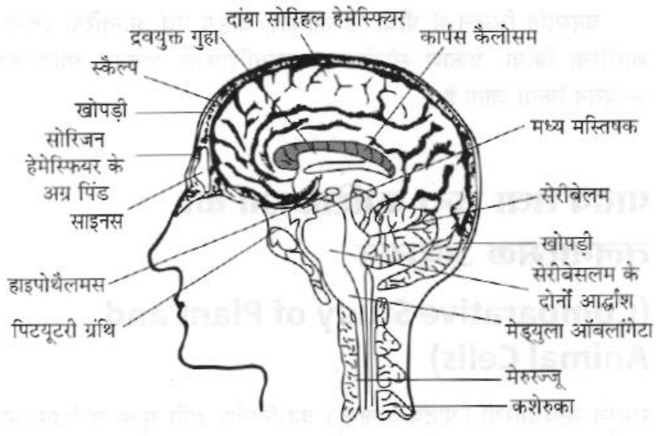

चित्र 1.4: मनुष्य के मष्तिष्क की संरचना

5. **परिधीय तन्त्रिका तन्त्र**—मस्तिष्क तथा मेरुरज्जु से निकलने वाली सभी तंत्रिकाएं इसके अन्तर्गत आती है। मस्तिष्क से निकलने वाली कपालीय तंत्रिकाएं तथा मेरुरज्जु से निकलने वाली स्पाइनल तंत्रिकाएं कहलाती है।
6. **संवेदांग**—वे अंग जो उद्‌दीपनों को ग्रहण करती हैं।
7. **अपवाहक अंग**—वे अंग जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के आदेशानुसार उद्‌दीपनों के अनुरूप प्रतिक्रिया करते है।

 संवेदी तंत्रिकाएं—ये तंत्रिकाएं उद्‌दीपनों की सूचनाओं को संवेदांगों से केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र पहुँचाती है।

 चालक तंत्रिकाएं—ये तंत्रिकाएं संवेदनाओं को केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र से अपवाहक अंगों तक पहुँचाती है।

 मिश्रित तंत्रिकाए—ये तंत्रिकाएं, संवेदी तंत्रिकाओं तथा चालक तंत्रिकाओं दोनों का ही कार्य करती है।

 कपालीय तंत्रिकाएं—मस्तिष्क के विभिन्न भागों से निकल कर शरीर के विभिन्न अंगों को जाती है। स्तनधारियों में ये 12 जोड़ी और मेढ़क में ये कुल 10 जोड़ी होती है।

 स्पाइनल तंत्रिकाएं—मेरुरज्जु से निकल कर शरीर के विभिन्न अंगो में जाती है। ये मिश्रित प्रकार की होती हैं इनकी संख्या 31 जोड़ी होती है। स्पाइनल तंत्रिकाएं मेरुरज्जु की दो जड़ों पृष्ठीय जड़ तथा अधरीय जड़ से निकलती है। ये दोनों कशेरुक दण्ड के भीतर परस्पर जुडी रहती है।

 स्पाइनल तंत्रिका तीन शाखाओं में विभक्त होती है—रैमस डार्सेलिस, रैमस वेन्ट्रेलिस तथा रैमस कम्यूनिकैन्स।

 रैमस डॉर्सेलिस पतली तथा छोटी शाखा है। इसमें सोमैटिक संवेदी तन्तु, संवेदनों को त्वचा, मांसपेशियों, सन्धियो से लाते हैं सोमैटिक चालक तन्तु त्वचीय तथा पृष्ठीय मांसपेशियों को जाते है। विसरल चालक तन्तु ग्रंथियों तथा रुधिर वाहिनियों की मांसपेशियों में जाते है।

 रैमस वेन्ट्रेलिस सबसे लम्बी होती हैं यह स्थानल तंत्रिका का प्रमुख भाग बनाती है। ये शरीर के पार्श्व में स्थित संवेदागों तथा प्रभावी अंगो को जाती है।

 सबसे छोटी तथा पतली शाखा होती है तथा स्वायत्र तन्त्रिका तंत्र से जुड़ी रहती है।

कंकाल तंत्र (Skeletal System)

शरीर का आधार ढांचा बनाने वाले अंग को कंकाल तथा इसके द्वारा बने तंत्र को कंकाल तंत्र कहते हैं। हड्डियों के ऊपर मांस पेशियों होती हैं जिनकी सहायता से इन्हें हिलाया-डुलाया जा सकता है। हड्डियां एवं मांस पेशियां शरीर के आन्तरिक भाग की सुरक्षा करती हैं भ्रूण मे कंकाल का निर्माण तीसरे माह हो जाता है। मनुष्य के शरीर में कुल 206 हड्डियां होती हैं जन्म के समय बच्चों में 213 हड्डियां पायी जाती है। अस्थि में 50 प्रतिशत जल तथा 50 प्रतिशत ठोस पदार्थ होते हैं। ठोस पदार्थों में 33 प्रतिशत अकार्बनिक तथा 67 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ पाये जाते हैं।

अस्थिमज्जा—अस्थि की मध्यवर्ती खाली नलिका में अस्थिमज्जा भरी होती है यह दो प्रकार की होती है।

लाल अस्थिमज्जा—इसमें लाल रक्त कणिकाओं का निर्माण होता है।

पीत अस्थिमज्जा—इसमें वसा तथा रक्त वाहिकाओं के साथ-साथ जालीय ऊतक होता है।

स्नायु—स्नायु दृढ़ संयोजी ऊतकों से बनी पट्टी के समान रचनाएं है। ये संधि के भीतर अस्थियों को बाँटते हैं तथा अस्थियों के जोड़ों को कसते हैं।

कंकाल के प्रकार—शरीर में उपस्थिति के आधार पर दो प्रकार के होते हैं—बाह्य एवं अतः कंकाल।

बाह्य कंकाल—शरीर के बाह्य सतह पर पाये जाते हैं स्तनधारियों में बाल, नाखून, खुर, सींग, दांत आदि तथा निम्न श्रेणी कशेरुकियों में पंख, शल्क, नखर आदि बाह्य कंकाल हैं बाह्य कंकाल शरीर के आंतरिक अंगो की रक्षा करता है यह मृत होता है।

अंत:कंकाल—शरीर के अन्दर सभी कशेरुकियों में पाया जाता है यह मांस पेशियों से ढ़का रहता है यह शरीर का मुख्य ढाँचा होता है यह एक प्रकार का संयोजी ऊतक है इसकी उत्पत्ति भ्रूण के मीसोडर्म से होती है जबकि बाह्य कंकाल की उत्पत्ति भ्रूण के एक्टोडर्म से होती है।

मनुष्य का कंकाल तंत्र—यह दो भागों का बना होता है—अक्षीय कंकाल तथा उपांगीय कंकाल।

अक्षीय कंकाल (Axial Skeleton)

शरीर का मुख्य अक्ष बनाते हैं इसके निम्न भाग है:

1. **खोपड़ी**—सिर प्रदेश के कंकाल को कहते हैं इसमें कुल 29 हड्डियां होती है। खोपड़ी की सभी हड्डियां आपस में सीवन से जुड़ी होती हैं।

2. **कशेरुक दण्ड**—मनुष्य के पृष्ठ सतह पर मध्य में सिर से कमर तक लम्बी-मोटी छड़ के समान अस्थि को कहते हैं। कशेरुक दण्ड छोटी-छोटी 26 हड्डियों से बना होता है प्रारम्भिक अवस्था में (नवजात) इनकी संख्या 33 होती है। कशेरुक का विकास नोटोकार्ड हो जाता है।
3. **स्टर्नम**—पसलियों को आपस में जोड़ने वाली अस्थि है जो वक्ष के बीचो-बीच पायी जाती है।
4. **पसली**—वक्ष के पार्श्व भाग में एक पिंजरानुमा संरचना बनाती हैं जो कई पतली व मुड़ी हुई अंस्थियों का होता है, मनुष्य में ये कुल 12 जोडी (24) होती हैं।

उपांगीय कंकाल (Appendicular Skeleton)

1. **पाद अस्थियां**—मनुष्य में चार पाद—दो अग्रपाद (हाथ) तथा दो पश्च-पाद (पैर) होते हैं। अग्रपाद (हाथ) में, प्रत्येक में ऊपरी बाहु, पूर्वबाहू, कलाई, हथेली एवं अंगुलियां पांच भाग होते हैं। पश्च-पाद भी पांच भागों में बटा होता है। पश्च पाद मे पटेला (टखनें का कैप) नामक हड्डी घुटने में होती है।
2. **मेखलाएं**—मनुष्य में अग्रपाद तथा पश्चपाद को साधने हेतु दो चाप पाये जाते हैं इन्हें मेखलाएं कहते हैं। अग्रपाद की मेखला को अंश मेखला तथा पश्चपाद की मेखला को श्रेणि मेखला कहते हैं।

वनस्पति विज्ञान (Botany)

वनस्पति विज्ञान शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के Boskein शब्द से हुई हैं जिसका अर्थ है चरना। इसी प्रकार Boskein शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के एक अन्य शब्द Bous से हुई जिसका अर्थ है पशु। इस प्रकार वनस्पति विज्ञान वह विज्ञान है जिसके द्वारा पशुओं के चरने से सम्बन्धित जीवधारियों का अध्ययन किया जाता है। थियोफ्रेस्ट्स ने (370-287 BC) 500 पौधों की एक सूची सर्वप्रथम बनाई थी इन्हें वनस्पति विज्ञान का जनक कहा जाता है।

वनस्पति विज्ञान में पौधों के आकार, वाह्य एवं आन्तरिक रचना, शारीरिक क्रिया, प्रकाश संश्लेषण, आनुवांशिकता, प्रजनन आदि का अध्ययन किया जाता है।

पादप तथा जन्तु कोशिकाओं का तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study of Plant and Animal Cells)

समस्त जीवधारियों (पादप व जन्तु) का निर्माण अति सूक्ष्म कोशिकाओं से हुआ। किसी भी जीव में होने वाली सभी क्रियाएं उसकी घटक कोशिकाओं में होने वाली विभिन्न जैव क्रियाओं के कारण होती। कोशिकाएं आनुवांशिक इकाई भी है तथा इनमें आनुवांशिकता के गुण उपस्थित होते हैं। जीव विज्ञान में कोशिका का संक्षिप्त परिचय दिया जा चुका है। अतः यहां जन्तु व पादप कोशिकाओं में समानता व असमानता ही मात्र दिया जायेगा।

पादप व जन्तु कोशिकाओं में समानताएं:

1. जन्तु कोशिका तथा पादप कोशिका दोनों में पतली), पारगम्य तथा जीवित प्लाज़्मा झिल्ली पाई जाती है।
2. जन्तु या पादप दोनों कोशिकाओं में माइटोकॉन्ड्रिया उपस्थित होते हैं, जो श्वसन के केन्द्र होते हैं।
3. दोनों कोशिकाओं में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेड तथा विटामिन आदि कार्बनिक पदार्थ तथा खनिज लवण, जल आदि के रूप में अकार्बनिक पदार्थ उपस्थित रहते है।
4. जन्तु तथा पादप दोनों कोशिकाओं में केन्द्रक पाया जाता है, जो सभी जैविक कार्यों को नियंत्रित करता है।
5. दोनों प्रकार की कोशिकाओं में कोशिकाद्रव्य पाया जाता है।

तालिका 1.18: पादप तथा जन्तु कोशिका में अंतर

जन्तु कोशिका	पादप कोशिका
1. जन्तु कोशिका में कोशिका-भित्ति नहीं होती। इसके चारों ओर जीवद्रव्य कला के रूप में एक जीवित झिल्ली होती है।	1. पादप कोशिका के चारों ओर कोशिका-भित्ति होती है, जो अजीवित पदार्थ कैल्शियम पैक्टेट तथा सैल्यूलोज से बनती है।
2. जन्तु कोशिकाओं में तारककाय उपस्थित होती है जो कोशिका विभाजन में सहायता प्रदान करता है।	2. पादप कोशिकाओं में तारककाय उपस्थित नहीं होता है।
3. यदि जन्तु कोशिकाओं में धानी उपस्थित होती है तो वह अत्यधिक छोटी होती है।	3. पादप कोशिकाओं में व्यापक रिक्तिकाएं होती है, जो कोशिका रस से भरी होती है।
4. जन्तु कोशिकाओं में ग्लाइकोजन के रूप में संरक्षित भोजन होता है।	4. पादप कोशिकाओं में लवक पाया जाता है, जो पादपों को विभिन्न रंग प्रदान करता है।
5. जन्तु कोशिकाओं में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं होती है।	5. हरित कोशिकाओं में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया होती है।

कोशिकीय प्रजनन या कोशिका विभाजन (Cellular Reproduction or Cell Division)

किसी एक कोशिका से दो कोशिकाओं का बनना ही कोशिका विभाजन कहलाता हैं कोशिका सिद्धांत के अनुसार, पुरानी कोशिकाओं के विभाजन से नयी कोशिकायें बनती है। कोशिका विभाजन ही कोशिकीय प्रजनन है। कोशिकीय प्रजनन एक आवश्यक प्रक्रिया है, जो जीवों की वृद्धि एवं विकास तथा प्रजनन एवं उसकी निरंतरता को बनाये रखने के लिये आवश्यक है। सभी नयी कोशिकाएं पुरानी या पैतृक कोशिकाओं के विभाजन से बनती है, इस तथ्य का सबसे पहले प्रतिपादन नगेली नामक वैज्ञानिक ने किया था।

तालिका 1.19: मनुष्य के कंकाल की अस्थियां

शरीर के भाग (1)	अंतः कंकाल के भाग (2)	प्रदेश (3)	अस्थियों के नाम (4)	प्रदेश की कुल अस्थियां (5)	भाग की कुल अस्थियां (6)
1. सिर	(अ) खोपड़ी	(A) अक्षीय कंकाल (1) कपाल	आक्सीपिटल 1 पैराइटल 2 टेम्पोरल 2 फ्रंटल 2 एथमाइड 1 स्फीनॉएड 1	8	29
		(2) फेसियल	नेजल 2 टरबाइनल 2 लैक्राइमल 2 वोमर 1 जाइगोमैटिक 2 मैक्जिला 2 पैलेटाइन 2 मैण्डिबल 1	14	
		(3) कर्ण-स्थियां	मैलियस 2 इन्कस 2 स्टेप्स 2	6	
		(4)	हॉयड 1	1	
2. पीठ की अस्थि	(ब) कशेरुक दण्ड (Vertebral Coloumn)	1 गर्दन 2 वक्ष 3 कटि 4 सैक्रम 5 पुंच्छ	सरवाइकल 7 कशेरुका थौरैसिक 12 कशेरुका लम्बर 5 कशेरुका सैक्रल कशेरुका 1 काडल 1	26	26
3. वक्ष	(स) स्टर्नम	–	स्टर्नम 1	1	1
	(द) पसलियां	–	पसलियां 24	24	24
4. वक्ष	(अ) अंश मेखला	उपांगीय कंकाल	स्कैपुला 2 क्लैविकल 2	4	4
5. कूल्हा	(ब) श्रोणि मेखला		आस-इन्नामिने 2-ट्स	2	2

(Continued)

तालिका 1.19: मनुष्य के कंकाल की अस्थियां (Continued)

शरीर के भाग (1)	अंतः कंकाल के भाग (2)	प्रदेश (3)	अस्थियों के नाम (4)	प्रदेश की कुल अस्थियां (5)	भाग की कुल अस्थियां (6)
6. अग्रपाद	–	1. ऊपरीबाहु	ह्यूमरस 2		
		2. अग्रबाहु	रेडियोअल्ना 4		
		3. कलाई	कार्पल्स 16	60	60
		4. हथेली	मेटाकार्पल्स 10		
		5. अंगुलियां	फैलेन्जेज 28		
7. पश्च पाद	–	1 जांघ	फीमर 2		
		2 पिंडली	टिबियोफिबुला 4		
		3 घुटना	पटेला 2	58	58
		4 टखना	टार्सल 14		
		5 तलवा	मेटाटार्सल्स 10		
		6 अंगुलियां	फैलेन्जेज 28		
			कुल योग 206		206

कोशिका विभाजन के प्रकार

कोशिकीय प्रजनन या कोशिका विभाजन निम्न तीन प्रकार का होता है:

1. समसूत्री कोशिका विभाजन
2. अर्द्धसूत्री कोशिका विभाजन
3. असूत्री कोशिका विभाजन

समसूत्री कोशिका विभाजन (Mitosis)

इसे कायिक कोशिका विभाजन भी कहते हैं। इस विभाजन की खोज डब्ल्यू फ्लेमिंग ने 1882 में की थी। इस विभाजन में मातृ कोशिका या मूल कोशिका दो समान कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है, जिसमें गुणसूत्रों की संख्या मातृ-कोशिका के समान ही होती है, इसीलिये इसे समसूत्री कोशिका विभाजन कहते हैं। यह कोशिका विभाजन कायिक या दैहिक कोशिकाओं में होता हैं कुछ निम्न श्रेणी के जीव, जिनमें निशेचन नहीं होता इसी विधि के द्वारा अलैंगिक प्रजनन करते हैं उदाहरण—कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ इत्यादि।

समसूत्री विभाजन का महत्व

1. समसूत्री विभाजन के कारण ही जीवों में वृद्धि एवं विकास होता है।
2. इस विभाजन के द्वारा मातृ कोशिकाओं के समान ही दो संतति कोशिकायें बनती है।
3. कुछ सूक्ष्म जीव इस विभाजन के द्वारा ही अलैंगिक प्रजनन करते है।
4. इस विभाजन के द्वारा शरीर की मरम्मत होती है तथा शरीर के घाव भरते है।

अर्द्धसूत्री कोशिका विभाजन (Meiosis)

इसे न्यूनकारी कोशिका विभाजन भी कहते हैं। इस विभाजन में एक मातृ कोशिका विभाजित होकर चार संतति कोशिकायें बनाती है, जिनमें गुणसूत्रों की संख्या मातृ कोशिका की आधी रह जाती है इसलिये इसे अर्द्धसूत्री या न्यूनकारी कोशिका विभाजन कहते हैं।

तालिका 1.20: समसूत्री तथा अर्द्धसूत्री विभाजन में अंतर

समसूत्री विभाजन	अर्द्धसूत्री विभाजन
1. यह विभाजन कायिक कोशिकाओं में होता है।	1. यह विभाजन जनन कोशिकाओं में होता है।
2. इस विभाजन में कम समय लगता है।	2. इस विभाजन में अधिक समय लगता है।
3. इस विभाजन द्वारा एक कोशिका से दो कोशिकायें बनती है।	3. इस विभाजन द्वारा एक कोशिका से चार कोशिकायें बनती है।
4. इस विभाजन से जीवों में वृद्धि एवं विकास होता है।	4. इस विभाजन से पौधों में नर एवं मादा युग्मक तथा जंतुओं में शुक्राणु एवं अण्डाणु बनते है।

(Continued)

समसूत्री विभाजन	अर्द्धसूत्री विभाजन
5. प्रोफेज में क्रांसिंग ओवर नहीं होती।	5. प्रोफेज में क्रांसिंग ओवर नामक प्रक्रिया पायी जाती है।
6. सेन्ट्रोमियर का विभाजन होता है।	6. सेन्ट्रोमियर विभाजित नहीं होता है।
7. सन्तति कोशिकाओं के गुणसूत्र जनक कोशिकाओं के समान होते हैं।	7. सन्तति कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या जनक कोशिकाओं की तुलना में आधी होती है।

अर्द्धसूत्री विभाजन का महत्व:

1. इस विभाजन के कारण ही पीढ़ी दर पीढ़ी जीवों की कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या समान बनी रहती है।
2. इस विभाजन के द्वारा जीवों में नये गुण पैदा होने की संभावना होती है।
3. यह विभाजन जैव विकास में सहायता करता है।

असूत्री विभाजन (Amitosis)

यह विभाजन कम विकसित एक-कोशिकीय जीवों में पाया जाता है। जैसे—कवक, शैवाल, इत्यादि। इस विभाजन में पहले केन्द्रक विभाजित होता है, फिर कोशिका द्रव्य। अंत में दो कोशिकायें बन जाती है।

विषाणु (Virus)

वाइरस शब्द की उत्पत्ति Virus शब्द से हुई है। 1898 में लोईलर एवं फ्रोस्च ने जानवरों में विषाणु जनित रोगों के संबंध में महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त की। तब इन्हें विषाणु कहा गया। विषाणु जीवित कोशिकाओं में परजीवी के रूप में पाये जाते हैं तथा अनेक प्रकार की बीमारियां फैलाते है।

विषाणुओं के लक्षण

- ये केवल जीवित कोशिका में ही वृद्धि एवं जनन कर सकते हैं।
- ये अपने चारों ओर के वातावरण के प्रति संवेदनशील होते हैं।
- पोषक कोशिका के बाहर इनमें प्रजनन की क्षमता नहीं पायी जाती है।
- पौधों में इनका विस्तार फ्लोएम के माध्यम से एवं जंतुओं के शरीर में रक्त के माध्यम से होता है।
- एक विषाणु केवल एक निश्चित जाति को ही संक्रमित करता है।

विषाणु सजीव एवं निर्जीव के बीच की कड़ी

(a) सजीवों के गुण

- संरचनात्मक विविधता।
- आर.एन.ए. एवं डी.एन.ए. की उपस्थिति।
- जीवों में बीमारी फैलाना।
- आनुवंशिकता एवं परजीविता।
- संवेदनशीलता एवं उत्परिवर्तन।

(b) निर्जीवो के गुण

- क्रिस्टलीकरण।
- कोशिका का अभाव।
- जीवद्रव्य का अनुपस्थित होना।
- पोषक के बाहर प्रजनन एवं वृद्धि नहीं।
- पोषक व उपापचयी क्रियाओं का अभाव।

इसीलिये विषाणुओं को सजीवों एवं निर्जीवो के बीजो की कड़ी भी कहा जाता है।

विषाणु की संरचना

विषाणु मुख्यतया गोलाकार या छड़ के समान होते हैं। इसकी रचना में मुख्य तीन भाग होते हैं:

1. प्रोटीन कैप्सिड
2. न्यूक्लिक अम्ल
3. आवरण

विषाणुओं के प्रकार

विषाणु या वायरस चार प्रकार के होते हैं:

तालिका 1.21: वायरस के प्रकार

1. पादप वायरस	पौधों में पाये जाते हैं।
2. जन्तु वायरस	जन्तुओं में पाये जाते हैं।
3. नीले-हरे शैवाल वायरस	नील-हरित शैवाल की कोशिकाओं में पाये जाते हैं।
4. जीवाणुभोजी	ये जीवाणु कोशिकाओं में पाये जाते हैं।

विषाणुओं से लाभदायक क्रियायें

1. इनमें सजीव एवं निर्जीव दोनों के गुण पाये जाने के कारण इनका उपयोग जैव विकास के अध्ययन में किया जाता है।
2. ये नीले-हरे शैवालों की सफाई करने में सहायक होते हैं।
3. इनकी सहायता से पानी को खराब होने से बचाया जाता है। जीवाणुभोजी पानी को सड़ने से रोकता है।

विषाणुओं से हानि

विषाणु पौधों, जानवरों एवं मनुष्यों में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करते है:

तालिका 1.22: पौधों के रोग

फसल का नाम	रोग का नाम
1. चुकन्दर	ऐंठा हुआ सिशिरोभाग
2. भिण्डी	पीली नाड़ी मोजेक
3. गन्ना	तृण समान वरोह
4. पपीता	मोजेक
5. केला	मोजेक
6. तिल	फिल्लोडी
7. सरसों	मोजेक
8. बादाम	रेखा पैटर्न
9. नींबू	नाड़ी का ऊतक क्षयन
10. टमाटर	पत्तियों की ऐंठन

तालिका 1.23: पशुओं के रोग

पशु का नाम	वायरस का नाम	रोग का नाम
1. गाय	वैरियोला वैक्सीनिया	चेचक
2. भैंस	पॉक्सविरिडी आर्थोपॉक्स	चेचक
3. चौपायें	रैब्डोविरिडी वैसोक्यूलो वायरस	ज्वर
4. गाय	ब्लू टंग वायरस	ब्लू टंग
5. गाय	हर्पीज वायरस	हर्पीज
6. गाय एवं भैंस	पैरामिक्सोविरीडी मोरविली वायरस	रिण्डपेस्ट डिजीज
7. गाय एवं भैंस	पिकोरनाविरीडी एईथो वायरस	मुंहपका एवं खुरपका
8. चौपाये (विशेषतया: कुत्ता)	स्ट्रीट वायरस	रैबीज

जीवाणु (Bacteria)

जीवाणु क्लोरोफिल विहीन, प्रोकैरियोटिक कोशिका वाले सरल कोशिकीय सूक्ष्म जीव है। जीवधारियों के वर्गीकरण में इन्हें जगत-मोनेरा के अंतर्गत रखा जाता है।

जीवाणुओं की खोज सर्वप्रथम 1683 में हालैण्ड के वैज्ञानिक एण्टोनीवान ल्यूवेनहॉक ने की थी। इन्होनें अपने द्वारा आविष्कार की गयी सूक्ष्मदर्शी में सर्वप्रथम जीवाणुओं को देखा तथा उन्हें एनीमैलीक्यूल कहा। एरेनबर्ग (1829) ने इन सूक्ष्मजीवियों को सर्वप्रथम बैक्टीरिया नाम दिया। जीवाणुओं के अध्ययन के क्षेत्र में एण्टोनीवान ल्यूवेनहॉक के योगदान के कारण इन्हें जीवाणु विज्ञान का पिता कहते हैं।

आवास एवं विशेषतायें

आवास (Habitat)

जीवाणु सभी स्थानों पर पाये जाते हैं। जहां कहीं भी जीवन संभव है, वहां जीवाणु पाये जाते हैं ये जमीन, जल, जड़, पौधो, शरीर, समुद्र, बर्फ, चट्टान इत्यादि सभी जगह पाये जाते हैं।

आकार (Shape)

जीवाणु निम्न चार रूपों में पायें जाते हैं:

1. छड़ाकार — छड़ के आकार के।
2. गोलाकार — गोल आकार के।
3. कोमाकार — अल्प विराम के चिन्ह (,) के आकार के।
4. सर्पिलाकार — स्प्रिंग या स्क्रू के आकार के।

जीवाणुओं में पोषण (Nutrition)

जीवाणुओं में दो प्रकार का पोषण पाया जाता है।

1. **स्वपोषी जीवाणु**—ये अपना भोजन स्वयं बनाते है। इसके अंतर्गत दो तरह के जीवाणु आते हैं:
   (i) प्रकाश संश्लेशी जीवाणु
   (ii) रसायन संश्लेशी जीवाणु
2. **विशमपोषी जीवाणु**—ये अपना भोजन दूसरे जीवों से प्राप्त करते है। ये तीन प्रकार के होते हैं:
   (i) परजीवी
   (ii) मृतोपजीवी
   (iii) सहजीवी

जीवाणुओं में प्रजनन

जीवाणुओं में प्रजनन निम्न तीन विधियों द्वारा होता है:

1. लैंगिक प्रजनन
2. अलैंगिक प्रजनन
3. वर्धी प्रजनन

जीवाणुओं से उत्पन्न होने वाली बीमारियां

जीवाणुओं के कारण पौधों, मनुष्यों एवं जंतुओं में अनेक प्रकार की बीमारियां उत्पन्न होती है। इनका वर्णन निम्नानुसार है

1. **पौधों की बीमारियां**—जीवाणु पौधों में अनेक प्रकार की बीमारियां फैलाते है।

तालिका 1.24: जीवाणु द्वारा बीमारी के नाम

बीमारी का नाम	कारक जीवाणु
1. आलू का भौथिल रोग	स्यूडोमोनास सोलेनेसीरम
2. धान का ब्लाइट	जैन्थोमोनास ओराइज़ी
3. नीबू का कैंकर रोग	जैन्थोमोनास सिट्री
4. बीन ब्लाइट	जैन्थोमानास फेजियोली
5. पोटैटो स्कैब	स्ट्रेप्टोमाइसिस स्कैबीज़
6. कपास का ब्लैक आर्म रोग	जैन्थोमोनास माल्वेसीरम

जीवाणुओं का आर्थिक महत्व (Economic Importanc of Bacteria)

जीवाणु हानिकारक तथा लाभदायक दोनों होते हैं। इनका वर्णन निम्नानुसार है:

1. **जीवाणुओं की हानिकारक क्रियायें**
   - **बीमारियां**—जीवाणु पौधों, जंतुओं एवं मनुष्यों में अनेक प्रकार की बीमारियां उत्पन्न करते है। इनका वर्णन पहले ही किया जा चुका है।
   - **भोजन को विषैला बनाना**—कुछ जीवाणु खाद्य पदार्थों को विषैला बना देते है। इससे खाने वाले की मृत्यु तक हो जाती है।
   - **विनाइट्रीकरण**—कुछ जीवाणु भूमि की उपयोगी नाइट्रोजन को अमोनिया एवं N_2 में परिवर्तित कर देते हैं। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है।
   - **भूमिगत पाइपों में सड़न पैदा करना**—कुछ जीवाणु भूमि में पाये जाने वाले सल्फेट्स को अपचयित कर देते हैं, इससे बदबू पैदा होती है। यह प्रक्रिया जब भूमिगत पादपों में होती है तो उनसे दुर्गंध आने लगती है।
2. **जीवाणुओं की लाभदायक क्रियायें**
   - **चमड़ा उद्योग**—जीवाणुओं का उपयोग इस उद्योग में किया जाता है। जीवाणु चमड़े की वसा का विघटन कर देते हैं।
   - **औषधि उद्योग**—औषधियां बनाने के लिये प्रतिजैविक एवं कुछ एन्जाइम्स उपयोग में लाये जाते हैं, जिन्हें जीवाणुओं से प्राप्त किया जाता है। प्रतिजैविक वे पदार्थ हैं, जो सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न किये जाते हैं तथा सूक्ष्मजीवों को विनष्ट करते है। जीवाणुओं द्वारा उत्पादित कुछ प्रमुख प्रतिजैविक निम्नानुसार है:

तालिका 1.25: जीवाणुओं से प्राप्त प्रमुख प्रतिजैविक

प्रतिजैविक	जीवाणु
1. टेरामाइसिन	स्ट्रेप्टोमाइसिस रिमोसम
2. स्ट्रेप्टोमाइसिन	स्ट्रेप्टोमाइसिस ग्रिसियस
3. क्लोरोमाइसिटिन	स्ट्रेप्टोमाइसिस वेनेजुएली
4. निओमाइसिन	स्ट्रेप्टोमाइसिस फ्राडी

   - **सिरका उद्योग**—इस उद्योग में एसीटोबैक्टर एसिटी नामक जीवाणु द्वारा सिरका बनाया जाता है। सिरका, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का महत्वपूर्ण रसायन है।
   - **रेशे निकालना**—रेशे प्रदान करने वाले विभिन्न पौधों जैसे—सन, पटसन, जूट इत्यादि से क्लास्ट्रीडियम ब्यूटीरियम नामक जीवाणु की सहायता से रेशे निकाले जाते हैं। यह क्रिया रेटिंग कहलाती है।
   - **डेयरी उद्योग**—दूध में उपस्थित लैक्टिक एसिड जीवाणु दूध की लैक्टोज शर्करा को दही या लैक्टिक एसिड में बदलते हैं। जिससे मक्खन प्राप्त किया जाता है।

तालिका 1.26: दूध से बनने वाले उत्पाद एवं उसमें भाग लेने वाले जीवाणु

दुग्ध उत्पाद	जीवाणु
1. मक्खन	स्ट्रेप्टोकॉकस लैक्टिस
2. छाछ या मट्ठा	स्ट्रेप्टोकॉकस लैक्टिस
3. दही	लैक्टोबैसिलस एवं स्ट्रे. लैक्टिस
4. पनीर	लैक्टोबैसिलस लैक्टिस
5. योगहर्ट	स्ट्रै. थर्मोफिलस एवं लैक्टो. बल्गेरिकस

   - **कृषि के क्षेत्र में**—जीवाणु, कृषि की उपजाऊ शक्ति को निम्न दो प्रकार से बढ़ाते हैं।

     (i) **नाइट्रीकारक जीवाणु**—ये जीवाणु अमोनिया को नाइट्राइट एवं नाइट्राइट को नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते हैं। इसमें भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है।

     (ii) **नाइट्रोजन स्थरीकरण**—कुछ जीवाणु जैसे एजोटोबैक्टर या क्लॉस्ट्रीडियम भूमि में नाइट्रोजन स्थरीकरण करते हैं। इससे भी भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है।

कवक (Fungi)

जीवों के आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार, जीवमण्डल के सभी बहुकोशिकीय, क्लोरोईलरहित, कोशिकाभित्त युक्त तथा सूकाय शरीर वाले जीवों को कवक जगत के अंतर्गत सम्मिलित किया गया है।

प्रमुख लक्षण

- ये बहुकोशिकीय यूकैरियोटिक जीव हैं।
- परजीवी या मृतोपजीवी होते हैं।
- बीजाणुओं के द्वारा जनन करते हैं।
- ये सर्वव्यापी होते हैं तथा इनकी कोशिका भित्ति काइटिन की बनी होती हैं।

- इनका शरीर अनेक पतले तंतुओं का बना होता है, जिन्हें कवक तंतु कहते हैं। ये आपस मे मिलकर कवक जाल बनाते हैं।
- ये अपना भोजन अवशोषित करते हैं।
- अलैंगिक तथा लैंगिक दोनों विधियों द्वारा जनन करते हैं।
- इनमें पूर्ण विकसित कोशिकांग पाये जाते हैं।

आवास (Habitat)

कवक जल, थल एवं वायु हर जगह पाये जाते हैं। ये सहजीवी, परजीवी एवं मृतोपजीवी के रूप में पाये जाते हैं। ये सामान्यतया: नम एवं कम प्रकाश वाले स्थान में पाये जाते हैं।

संरचना—कवकों की कोशिकाओं में सभी विकसित कोशिकांग पाये जाते हैं। जैसे-माइटोकॉन्ड्रिया, राइबोसोम, गाल्गीकाय इत्यादि। कवकों में क्लोरोफिल का पूर्णतया अभाव पाया जाता है, इसलिए ये अपना भोजन नहीं बना पाते हैं। कवक कोशिका के चारों ओर कोशिका भित्ति पायी जाती है, जा काइटिन की बनी होती है।

पोषण—क्लोरोफिल की अनुपस्थिति के कारण कवक अपना भोजन नहीं बना पाते। अत: ये विशमपोशी होते हैं। ये अपना भोजन चूसकर प्राप्त करते है। वे कवक जो दूसरे जीवों से अपना भोजन प्राप्त करते हैं उन्हें परजीवों कहते हैं। कुछ कवक ऐसे होते हैं, जो दूसरे जीवों से भोजन तो प्राप्त करते है परंतु उन्हें किसी प्रकार से हानि नहीं पहंचाते, ऐसे कवकों को सहजीवी कहते हैं। कुछ कवक ऐसे होते हैं, जो सड़े-गले एवं मृत कार्बनिक पदार्थों से अपना भोजन प्राप्त करते है, मृतोपजीवी कहते हैं।

कवकों का आर्थिक महत्व (Economic Importance of Fungi)

लाभदायक कवक—कवक निम्न रूपों में लाभदायक होते हैं:

- कवकों से अनेक प्रकार के एण्टीबायोटिक्स प्राप्त किये जाते हैं, जो कई प्रसिद्ध औषधियाँ हैं।

तालिका 1.27: कवक से प्राप्त होने वाले एंटीबायोटिक्स

कवक का नाम	प्राप्त होने वाला एंटीबायोटिक
1. पेनीसीलियम नॉटिटम	पेनिसीलिन
2. पेनीसीलियम क्लेवीर्डोर्मी	क्लैविसिन
3. पे. सिट्रिनम	साइट्रिनिन
4. पे. ग्रीसियोफ्यूल्वम	ग्रीसियोफ्यूल्विन
5. पे. प्यूबेरुलम	प्यूबेरिक एसिड
6. ट्राइकोडर्मा	ग्लिओटॉक्सिन

- कवक भूमि में पड़े हुये सड़े-गले पदार्थों को अपघटित करके अन्य पदार्थों में परिवर्तित कर देते हैं। ये पदार्थ उर्वरक के समान कार्य करते हैं तथा भूमि की उर्वरता बढ़ाते हैं।
- कुछ कवक खाने में प्रयुक्त किये जाते हैं। रोमेरिया, क्लेवेसिया, एगैरिकस लाइकोपरगन को मशरुम के रूप में खाया जाता है। मशरुम में बहुत अधिक प्रोटीन होता है। मारचेला, जिसे गुच्छी कहते हैं, भी खाने में प्रयोग किया जाता है।
- कई कवक जैसे—रोडोटुरुला नाइट्रोजन स्थरीकरण करते है तथा भूमि का उपजाऊपन बढ़ाते हैं।
- यीस्ट तथा कुछ अन्य कवकों का प्रयोग किण्वन द्वारा शराब बनाने में किया जाता है। ये कवक एन्जाइम्स की सहायता से कार्बोहाइड्रेट युक्त पदार्थों का किण्वन करके उसे शराब में परिवर्तित कर देते हैं।
- यीस्ट तथा कुछ कवकों का उपयोग बेकरी उद्योग में किया जाता है। आटे को गूंथकर उनमें इन कवकों को मिला देने से डबलरोटी फूलकर स्पंजी हो जाती है।
- पैनीसीलियम रोक्यूफर्टाई इत्यादि कवकों का प्रयोग दूध से पनीर बनाने में किया जाता है।
- कवकों के द्वारा कई प्रकार के अम्लों एवं रासायनिक पदार्थों का निर्माण किया जाता है। जैसे—म्यूकर तथा राइजोपस की सहायता से फ्यूमेरिक अम्ल, एस्परजिलस नाइगर से साइट्रिक अम्ल तथा पेनीसीलियम परप्यूरोजेनम से ग्लूकोनिक अम्ल बनाया जाता है।
- कुछ कवकों द्वारा बनाये गये पदार्थ कीटों को नष्ट कर देते हैं। वह प्रक्रिया, जिसमें एक जीव के पदार्थ से दूसरे जीव को नष्ट कर दिया जाता है जैविक नियंत्रण कहलाती है।

तालिका 1.28: पौधो के रोग

रोग का नाम	उत्पन्न करने वाला कवक
1. धान का पादप विगलन	फ्यूसेरियम मोनीलीफॉरमे
2. मूंगफली का टिक्का रोग	सरकोस्पोरा परसोनेटा एवं सरकोस्पोरा एराचीडीकोला
3. आलू का विलंबित अंगमारी	फाइटोफ्थेरा इन्फेस्टेन्स
4. मूली, शलगम, गोभी और सरसों मृदुरोमिल आसिता	पेरोनोस्पोरा पैरासाइटिका
5. आलू का पूर्व अंगमारी	आल्टरनेरिया सोलेनाई
6. गेहूँ का चूर्ण आसिता	इरीसाइफी ग्रेमिनिस
7. पपीता का फल विगलन	पाइथियम एफाइनीडरमेटम
8. बाजरा का मृदुरोमिल आसिता	स्क्लेरोस्पोरा ग्रेमिनीकोला
9. अंगूर का मृदुरोमिल आसिता	प्लासमोफोरा विटीकोला
10. धान का बंट	टिल्लेटिया इन्डिका
11. सेम का किट्ट	यूरोमाइसेस एपेन्डीकुलेटस
12. अरहर की म्लानी	फ्यूसेरियम आक्सीस्पोरम
13. गन्ने का लाल विगलन	कोलेटोट्राइकम फालकेटम

पादप जगत (Plant Kingdom)

जीवों के आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार, जीवमण्डल के सभी बहुकोशिकीय, यूकैरियोटिक कोशिका वाले, हरितलवण युक्त, प्रकाश संश्लेशी एवं स्वपोशी जीवों को इस जगत में रखा गया है।

आधुनिक वर्गीकरण के आधार पर पादप जगत को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है:

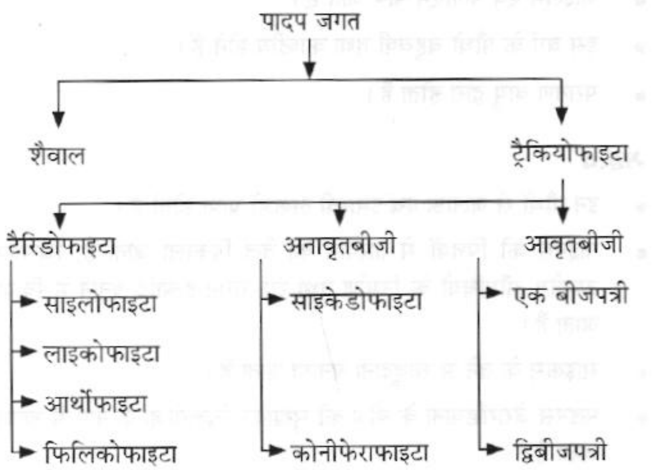

चित्र 1.5: पौधों का वर्गीकरण

शैवाल (Algae)

शैवाल पर्णहरिमयुक्त, संवहन ऊतक रहित, थैलोफाइट्स है जिनके थैंलस में वास्तविक जड़ें, तना तथा पित्तयां आदि नहीं होते। इनमें सूक्ष्म एककोशीय पौधों से लेकर विशालकाय बहुकोशीय पौधो पाये जाते हैं। इनमें जननांग प्राय: एककोशीय होते हैं, यद्यपि कुछ भूरे रंग के शैवालों में ये बहुकोशीय भी होते हैं। वनस्पति-विज्ञान की वह शाखा जिसमें शैवाल का अध्ययन करते हैं, फाइकोलॉजी कहलाती है।

शैवालों का आर्थिक महत्व
(Economic Importance of Algae)

निम्नलिखित कारणों से शैवाल मनुष्य जाति के लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं:

- **शैवाल खाद्य के रूप में**—शैवालों में कार्बोहाइड्रेट्स, अकार्बनिक पदार्थ तथा विटामिन्स प्रचुर मात्र में पाये जाते हैं। विटामिन ए, सी, डी और इ इनमें मुख्य रूप से होते हैं। फियोफायसी वर्ग का शैवाल पॉरफिरा सामान्य रूप से जापान में खाया जाता है। जापान तथा निकटवर्ती देशों में एलेरिया, अलवा, सारगासम, लेमिनेरिया आदि शैवाल शाक के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। लेमिनेरिया नामक शैवाल से आयोडीन उत्पन्न होती है। अलवा को प्राय: समुद्री सलाद कहते हैं।

कुछ शैवालों जैसे जेलीडियम, ग्रेसीलेरिया आदि से अगार-अगार नामक पदार्थ प्राप्त होता है जो कि जैली तथा आइसक्रीम बनाने के काम आता है।

- **शैवाल व्यवसाय में**—डाइएटम्स, डाइएटोमेशियस मृदा का निर्माण करती है जो निम्नलिखित रूप से उपयोगी है:

  1. चीनी मिलों में जीवाणु छन्नों के रूपों में।
  2. कांच तथा पोर्सिलेन के निर्माण में।
  3. बॉयलर तथा वात भट्टी में रोधी के रूप में।
  4. धातु प्रलेप, वार्निश, पालिश तथा टूथपेस्ट के निर्माण के लिए अपघर्षक के रूप में।
  5. द्रव नाइट्रोग्लिसरीन के अवशोषक के रूप में।

- जापान में सारगासम से कृत्रिम ऊन का निर्माण किया जाता है। केराड्रस नामक शैवाल से कारोगेनिन नामक श्लेष्मिक पदार्थ निकाला जाता है जिसका प्रयोग श्रृंगार-प्रसाधनों, जूतों की पालिश तथा शेम्पू आदि बनाने में होता है।
- **नाइट्रोजन स्थिरीकरण**—मिक्सोफाइसी वर्ग के पौधों जैसे नोस्टोक, एनाबीना आदि वायुमण्डलीय तात्विक नाइट्रोजन को पौधों के काम में आने योग्य यौगिकों में परिवर्तित करते हैं।
- **शैवाल का औषधीय महत्त्व**—क्लोरेला से एक प्रतिजैविक क्लोरेलीन तैयार की जाती है। कारा तथा नाइटेला नामक शैवाल जलाशयों में उपस्थित मच्छरों को मारकर मलेरिया उन्मूलन में सहायक होते हैं।
- लैमिनेरिया से आयोडीन निर्माण किया जाता है।

शैवाल से हानि

- माइक्रोसिस्टिम, एसीलेटोरिया, एनाबिना आदि शैवाल जलाशयों में 'वॉटर-ब्लूम' उत्पन्न करते हैं।
- मृत शैवाल जलाशयों को दूषित कर देती है जिसे जलीय जीव प्रभावित होते हैं।
- सिफैल्यूरस शैवाल चाय की पत्तियों पर परजीवों के रूप में उगती हैं तथा चाय-उद्योग को हानि पहुँचाती हैं।

लाइकेन्स (Lichens)

लाइकेन एक स्वपोशी, संयुक्त, सहजीवी एवं सूकायवत जीव है, जिनमें कवक तथा शैवाल साथ-साथ संयुक्त रूप से रहते हैं। इसे पादप जगत का ही सदस्य माना जाता है क्योंकि यह हरा, स्वपोशी एवं बहुकोशिकीय होता है। लाइकेन में कवक एवं शैवाल दोनों एक-दूसरे को सहायता पहुंचाते हैं। ऐसे संबंध को सहजीवी संबंध कहते हैं। लाइकेन में कवक तथा शैवाल आपस में इतनी घनिष्टता के साथ रहते हैं। कि ये एक ही पौधो के समान दिखाई देते हैं।

ये नम भूमि, पेड़ की छाल, चट्टानों, लकड़ी के लट्ठे, पेड़ो की छाल तथा विशेष रूप से नमी वाले स्थानों में उगते हैं।

लाइकेन से लाभ

- पेल्टीजेरा से हाइड्रोफोबिया के लिए, इवार्निया से कफ के लिए तथा क्लैडोनिया से ज्वर के लिए औषधि बनायी जाती है।

- कुछ लाइकेन्स सुगंधित भी होते हैं, जिनका उपयोग सुगंधित साबुन, अगरबत्ती, हवन सामग्री इत्यादि के बनानें में प्रयोग किये जाते हैं। जैसे—रैमेलाइना इत्यादि।
- लाइकेन मनुष्य तथा अन्य जीवों द्वारा भोजन के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। जैसे—लीकेनोरा, पार्मेलिया, क्लैडोनिया इत्यादि।
- कुछ लाइकेनों का प्रयोग चट्टानों से खनिज लवणों को प्राप्त करने में किया जाता है।
- कुछ लाइकेन कपड़ा तथा चमड़ें की वस्तुओं को रंगने के काम में प्रयुक्त किये जाते हैं।

लाइकेन से हानि

- गर्मियों में लाइकेन सूख जाते हैं तथा जंगलों में आग लगने पर उसे तेजी से फैला देते हैं।
- लाइकेन लकड़ियों, कांचों एवं दीवारों को भी नष्ट कर देते हैं।

ब्रायोफाइटा (Bryophyta)

ब्रायोफाइटा के सदस्य जल एवं थल दोनों में पाये जाते है। इसलिये इस प्रभाग को पादप जगत का उभयचर कहते हैं। इन्हें प्रथम स्थलीय पौधा भी माना जाता है। ये नम क्षेत्रें जैसे—झीलों, झरनों, नदियों के किनारे तथा पुरानी नम दीवारों इत्यादि में पाये जाते है। वर्षा के दिनों में इन्हें दीवारों पर हरी चादर के रूप देखा जा सकता है।

इनमें हरितलवक होते हैं। निशेचन के लिये जल आवश्यक होता है। और शरीर थैलसनुमा होता है। इनके जनन अंग बहुकोशिकीय होते हैं। मार्कैन्शिया, रिक्सिया, नोटोथायलस, एन्थेसिरॉस एवं मॉस इसके उदाहरण है।

ब्रायोफाइटा का महत्व (Importance of Bryophtes)

- मॉस के पौधो में जल अवशोषण की क्षमता के कारण शाखाओं के रोपण में प्रयोग किया जाता है।
- इनका उपयोग घावों की ड्रेसिंग एवं गद्दों को भरने में किया जाता है।
- ये भूमि के कटाव को रोकने में सहायता करते हैं।

ट्रैकियोफाइटा (Tracheophyta)

ट्रैकियोफाइटा प्रभाग की अब तक लगभग 2 लाख 75 हजार जातियों की खोज की जा चुकी है। ये जीवमण्डल तथा मनुष्य के लिये सबसे अधिक उपयोगी एवं लाभदायक पौधो होता है।

ट्रैकियोफाइटा तीन उप-भागों में बांटा गया है।

1. टैरिडोफाइटा
2. जिम्नोस्पर्म (परीक्षा के महत्त्वपूर्ण)
3. एंजियोस्पर्म (परीक्षा के महत्त्वपूर्ण)

अनावृत्तबीजी (Gymnosperms)

उन पौधों को इसमें रखते हैं। जिनके बीज में आवरण नहीं पाया जाता है। ये पौधों मुख्य रूप से सदाबहार वनों एवं पहाड़ी क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

लक्षण

- बीजो में आवरण नहीं पाया जाता है।
- जाइलम एवं फ्लोएम पाये जाते हैं।
- इस वर्ग के पौधो बहुवर्षी तथा काष्ठीय होते हैं।
- परागण वायु द्वारा होता है।

महत्व

- इन पौधों से जलाऊ एवं इमारती लकड़ी प्राप्त होती है।
- पाइनस की पित्तयों से तारपीन का तेल निकाला जाता है, जिसका उपयोग औषधियों के निर्माण तथा रंग-रोगन इत्यादि बनाने में किया जाता है।
- साइकस के तने से साबूदाना बनाया जाता है।
- पाइनस जेरारडियाना के बीज को सुखाकर चिलगोजा के नाम से खाया जाता है।
- इफेड्रा से इफेड्रीन नामक दमा की औषधि बनायी जाती है।
- दैवदार से सीडर आयल प्राप्त होता है, जिससे इत्र, साबुन व रंग बनाने में प्रयोग किया जाता है।
- साइकस की पित्तयों से रस्सी व झाडू बनायी जाती है।
- कुछ कानिफर्स के रेशों से कागज बनाया जाता है।

आवृतबीजी (Angiosperms)

उन पौधों को रखा जाता है, जिनके बीजों में आवरण पाया जाता है। इस समुदाय के पौधों पुष्पीय पादप भी कहते हैं क्योंकि इनमें पूर्ण विकसित पुष्प पाये जाते है। पुष्पीय अब तक एंजियोस्पर्म की लगभग 2 लाख 50 हजार जातियों को खोजा जा चुका है। ये पृथ्वी के सबसे अधिक विकसित पादप है।

लक्षण

- सामान्यतया पौधो स्थलीय होते हैं किंतु कुछ जल में भी पाये जाते है।
- इनका संवहन तंत्र बहुत अधिक विकसित होता है।
- इनके प्रजनन अंग पुष्प होते हैं।
- इनमें दोहरे निशेचन की क्रिया पायी जाती है।
- ये वातावरण के प्रति बहुत अधिक अनुकूलित होते हैं।
- ये मृतोपजीवी, परजीवी, सहजीवी, कीटभक्षी तथा स्वपोशी के रूप में पाये जाते हैं।

- आवृतबीजी पौधों एकबीजपत्री एवं द्विबीजपत्री वर्गों में बांटे जाते है। मक्का, गेहूं, चावल, दूब (घास), ज्वार, बाजरा, नारियल आदि एकबीजपत्री तथा मूली, गोभी, सरसों, अरहर, चना, उड़द, मसूर, लौकी, मिर्च, टमाटर, बैगन, काजू, आम, सूर्यमुखी, गेंदा आदि द्विबीजपत्री पौधें है।

पादप ऊतक (Plant Tissues)

ऊत्तक एक या एक से अधिक प्रकार की कोशिकाओं के संगठन होते हैं। कोशिकाओं का ऐसा समूह, जिससें कोशिकाएं उद्गम, आकृति परिवर्द्धन तथा कार्य की दृष्टि से समान होती हैं, ऊत्तक कहलाती है।

ऊत्तकों की कोशिकाओं के विभाजित होने तथा नई कोशिकाओं के निर्माण के आधार पर पादप ऊत्तक को मुख्यत: दो वर्गों में बांटा गया है - विभज्योत्तक ऊत्तक तथा स्थायी ऊत्तक।

- **विभज्योत्तक ऊतक**—विभज्योत्तक ऊतक का निर्माण, पौधों की वृद्धि के लिए उत्तरदायी कोशिकाओं द्वारा होता है। ऐसे ऊतकों की कोशिकाओं में हमेशा तीव्र गति से विभाजित होते रहने का गुण मौजूद रहता है। यह ऊतक पौधों के वर्धी भागों जैसे—तने तथा जड़ों के अग्र सिरे में पाये जाते है। विभज्योत्तक ऊतक मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं।

तालिका 1.29: जड़ों के प्रकार

जड़ के प्रकार	संबंधित पौधा
1. मूसल जड़	
• भोजन संग्रह के लिये शंक्वाकार जड़	गाजर
• भोजन संग्रह के लिये तर्कुरूप जड़	मूली
• भोजन संग्रह के लिये कुंभीरूप जड़	चुकन्दर, शलगम
• श्वसन के लिये	राइजोफोरा, पादप सुंदरी
2. अपस्थानिक जड़	
• भोजन संग्रह के लिये पुलकित या गुच्छी मूल	सतावर, डहेलिया
• भोजन संग्रह के लिये कंद मूल	शकरकंद
• भोजन संग्रह के लिये ग्रंथिल मूल	हल्दी
• भोजन संग्रह के लिये मणिकामय मूल	अंगूर, डायोस्कोरिया एलाटा
• आधार प्रदान करने के लिए स्तम्भ मूल	बरगद
• आधार प्रदान करने के लिए अवस्तंभ मूल	केवड़ा, मक्का, गन्ना
• आधार प्रदान करने के लिए पुश्त मूल	सेमल
• आधार प्रदान करने के लिए आरोही मूल	काली मिर्च, मनीप्लाण्ट, पान
• आधार प्रदान करने के लिये चिपकने वाली जड़ें	वैण्डा
• विशिष्ट कार्य करने के लिये प्रचूशी मूल	आर्किड
• विशिष्ट कार्य करने के लिये परिपाची मूल	सिंघाड़ा, टीनोस्पोरा
• विशिष्ट कार्य के लिये जनन मूल	पथरचट्टा, बेगोनिया
• विशिष्ट कार्यों के लिये चूशकी मूल	अमरबेल (कस्कुटा)
• विशिष्ट कार्यों के लिये कवक मूल	भोजपत्र, चीड़ (पाइन)
• विशिष्ट कार्यों के लिये प्लावी मूल	जूसिया
• विशिष्ट कार्यों के लिये संकुचनशील जड़ें	प्याज, कैना, जिमीकंद
• विशिष्ट कार्यों के लिये मूल ग्रंथिका	मटर

तालिका 1.30: एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री जड़ की आंतरिक संरचना में अंतर

एकबीजपत्री जड़	द्विबीजपत्री जड़
1. यह केवल पार्श्व का निर्माण करती है।	1. यह पार्श्व मूलें तथा द्वितीयक विभज्योतक दोनों का निर्माण करती है।
2. इनके संवहन पूल की संख्या सामान्यतया 6 से अधिक होती है।	2. इनके संवहन पूल की संख्या सामान्यतया 6 से कम होती है।
3. इसमें कैम्बियम का अभाव होता है।	3. इसमें कैम्बियम पाया जाता है।
4. इसमें द्वितीयक वृद्धि नहीं पायी जाती है।	4. इसमें द्वितीयक वृद्धि पायी जाती है।
5. इसमें पिथ पूर्ण विकसित होता है।	5. इसमें पिथ अल्पविकसित या अनुपस्थित होता है।

तालिका 1.31: एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री तने की आंतरिक संरचना में अंतर

एकबीजपत्री तना	द्विबीजपत्री तना
1. इसकी एपीडर्मिस पर रोम नहीं पाये जाते।	1. इसकी एपीडर्मिस पर रोम पाये जाते है।
2. इसकी हाइपोडर्मिस स्क्लेरेन्काइमा की बनी होती है।	2. इसकी हाइपोडर्मिस स्क्लेरेन्काइमा की बनी होती है।
3. इसमें वस्कुलर बंडल बंद प्रकार के होते हैं।	3. इसमें वस्कुलर बंडल खुले प्रकार के होते हैं।
4. इसमें मज्जा किरणें नहीं पायी जाती है।	4. इसमें मज्जा किरणें पायी जाती है।
5. इसमें कैम्बियम नहीं पाया जाता। फलत: द्वितीयक वृद्धि का अभाव होता है।	5. इसमें कैम्बियम पाया जाता है, इसलिये द्वितीयक वृद्धि भी पायी जाती है।
6. पिथ (मज्जा) अनुपस्थित होता है।	6. पिथ (मज्जा) उपस्थित होता है।

अध्याय सार संग्रह

- विश्व का सबसे बड़ा पौधा सिकुआडेन्ड्रॉन है। जिसकी ऊंचाई 90 मीटर तथा व्यास 13 मीटर होता है।
- सबसे लंबा आवृतबीजी पौधा यूकेलिप्टिस है।
- विश्व का सबसे छोटा पुष्प वोल्फिया होता है।
- सबसे बड़ा फूल रैफ्लीसिया का होता है।
- सबसे छोटे बीज आर्किड्स के होते हैं।
- सबसे बड़ी पत्ती विक्टोरिया रेजिया की होती है।
- अमीबा कभी मरता नहीं है। यह सदैव अमर रहता है।
- विश्व का सबसे अधिक उम्र वाला जीव सिकोआ पौधा है इसकी उम्र 3000 से 4000 वर्ष होती हे।
- कोशिका के रूप में जीवों का विकास इस प्रकार से हुआ। सबसे पहले मोनेरा-फिर प्रोटिस्टा-फिर-प्लाण्टी, एनीमेलिया एवं फंजाई।
- पृथ्वी पर बनने वाले प्रथम प्रकाश संश्लेशी जीव सायनोजीवाणु थे।
- जीवों के वर्गीकरण का सबसे पहले व्यवस्थित प्रयास हिप्पोक्रेट्स एवं अरस्तू ने किया था।
- 'चरक' को आयुर्वेद का जनक माना जाता है।
- स्पीशीज़ शब्द का सबसे पहले प्रयोग 'जॉन रे' ने किया था।
- शतुरमुर्ग पक्षी का अंडा सबसे बड़ी जंतु कोशिका होती है।
- खनिज पदार्थ हमारे शरीर की उपापचयी क्रियाओं का नियंत्रण करते हैं।
- मैग्नीशियम और कैल्सियम के लवण स्तरीकरण द्वारा दांतों एवं हड्डियों को मजबूत बनाते है।
- प्राकृतिक रूप से पायी जाने वाली शर्कराओं में फ्रक्टोज सबसे मीठी शर्करा होती है।
- तेलीय एवं वसा जैसे पदार्थों को 'लिपिड' कहते हैं।
- अमीनो अम्ल प्रोटीन का संश्लेषण करते हैं।
- फलों के रस में फ्रक्टोज़ शर्करा होती है।
- ऊतक संवर्धन वह तकनीक है, जिसमें कोशिका एवं कोशिकाओं के समूह को शरीर के बाहर कृत्रिम भोज्य पदार्थों के माध्यम से जिन्दा रखा जाता है।
- सभी स्वपोषी, प्रकाश संश्लेषण करने वाले बहुकोशिकीय जीवों को पादपों (पौधों) की श्रेणी में रखा जाता है।
- जिन पौधों में पुष्प बनते हैं, उन्हें पुष्पीय पादप कहते हैं।
- रैफ्लेशिया पौधों का फूल संसार का सबसे बड़ा फूल होता है।
- स्पर्जिलस नामक कवक से डायस्टेज नामक एन्जाइम प्राप्त होता है।
- पेनिसीलियम की कुछ जातियां पनीर बनाने के काम आती है।